ISSN : 2278-4632

JUNI KHYAT
जूनी ख्यात

इतिहास, कला एवं संस्कृति की शोध पत्रिका

A Peer-Reviewed and Listed in UGC Care List

मरू भूमि शोध संस्थान, श्री डूँगरगढ़ (राज.)
MARUBHUMI SHODH SANSTHAN, SRI DUNGARGARH (RAJ.)

संपादक
डॉ. बी. एल. भादानी

सह संपादक
डॉ. राजेन्द्र कुमार

23/09

'जूनी ख्यात' सम्पादक मण्डल

प्रो. हरबंस मुखिया	पूर्व विभागाध्यक्ष	इतिहास विभाग, जवाहर लाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
प्रो. वसन्त शिंदे	पुरातत्त्व एवं प्राचीन इतिहास	कुलपति दक्कन कॉलेज, पूना
प्रो. एस. इनायत अली ज़ैदी	पूर्व विभागाध्यक्ष	जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
प्रो. एल.एस. निगम	प्राचीन इतिहास	पूर्व विभागाध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर
प्रो. दिलबाग सिंह	आर्थिक इतिहास	इतिहास विभाग, जवाहर लाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
प्रो. जी.एस.एल. देवड़ा	मध्यकालीन इतिहास	पूर्व कुलपति, कोटा खुला विश्वविद्यालय कोटा (राजस्थान)
प्रो. के.एस. गुप्ता	पूर्व विभागाध्यक्ष इतिहास विभाग	मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
प्रो. अब्दुल मतीन	पूर्व विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र	अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उत्तरप्रदेश)
प्रो. आर. आभापाल	आधुनिक इतिहास	स्कूल ऑफ सोशियल साईंसेज, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर

JUNI KHYAT

जूनी ख्यात

(सामाजिक विज्ञान, कला एवं संस्कृति की शोध पत्रिका)

वर्ष : 9 • अंक 1

जुलाई-दिसम्बर 2019

A Peer-Reviewed and Listed in UGC Care List

ISSN 2278-4632

प्रबंध संपादक

श्याम महर्षि

संपादक

डॉ. बी. एल. भादानी

प्रोफेसर

सह संपादक

डॉ. राजेन्द्र कुमार

मरुभूमि शोध संस्थान

संस्कृति भवन

एन.एच. 11, श्रीडूँगरगढ़ (बीकानेर) राजस्थान

विज्ञापन एवं प्रचार-प्रसार :
महावीर प्रसाद माली, श्रीडूँगरगढ़, बीकानेर
सम्पर्क सूत्र :
प्रबंध सम्पादक-श्याम महर्षि
प्रकाशकीय एवं विज्ञापन कार्यालय :
सचिव, मरुभूमि शोध संस्थान, श्रीडूँगरगढ़-331803 (बीकानेर) राज.
आजीवन सदस्यता 2000 रु.
सहयोग दर :
(व्यक्तिगत) चार अंक 300 रुपये ❑ एक अंक 75 रुपये
(संस्था) चार अंक 400 रुपये ❑ एक अंक 100 रुपये
बाहरी चैक के लिए 25 रुपये अतिरिक्त
विदेश :
(व्यक्तिगत) चार अंक-इंग्लैण्ड 40 पाउण्ड ❑ अमेरिका 50 डालर
(संस्था) चार अंक-इंग्लैण्ड 80 पाउण्ड ❑ अमेरिका 100 डालर
हवाई डाक :
इंग्लैण्ड 10 पाउण्ड (10) एवं अमेरिका 20 डालर अतिरिक्त
आजीवन शुल्क संस्था के निम्न खाते में सीधा ट्रांसफर करके हमें बताने की कृपा करें।
1. Punjab National Bank 2. Sri Dungargarh
3. मरुभूमि शोध संस्थान 4. खाता सं. 3604000100174114
5. IFSC Code - PUNB0360400
ड्राफ्ट/नकद भुगतान भेजने का पता :
श्याम महर्षि
सचिव :
मरुभूमि शोध संस्थान
(राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रचार समिति)
श्रीडूँगरगढ़ 331803 (बीकानेर) राज.
फोन-01565-222670
आलेख सीडी में या ईमेल किया जा सकता है।
सम्पादकीय कार्यालय :
डॉ. बी.एल. भादानी
रांगड़ी चौक, बीकानेर 334001 (राज.)
मो. 9950678920
ई मेल-bbhadani.amu@gmail.com • kumaarrajender11@gmail.com

महत्त्वपूर्ण जानकारी

पाठकों से निवेदन है कि **जूनी ख्यात** में प्रकाशन हेतु शोध पत्र की एक प्रति Word तथा एक प्रति PDF फाइल में अवश्य भेजें। यदि शोध पत्र हिन्दी में है तो Kruti Dev 010 तथा अंग्रेजी में है तो Times New Roman नामक फोन्ट का प्रयोग करें।

शोध पत्र से सम्बन्धित छाया चित्रों को कम से कम 300 डीपीआई में सुरक्षित कर जे पी जी फाइल बनाकर अलग से अनुशीर्षक सहित भेजें।

शोध पत्र को इस पते पर e-mail करें bbhadani.amu@gmail.com अथवा डाक से सीडी बनाकर सम्पादक, **जूनी ख्यात**, रांगड़ी चौक, बीकानेर (राज.) 334001 के पते पर भिजवाएँ।

सम्पादक

Sl.No.	Journal No.	Title	Publisher	ISSN
192		**JUNI KHYAT**		2278-4632

UGC Journal Details

Name of the Journal **: JUNI KHYAT**

ISSN Number : 2278-4632

e-ISSN Number : NA

Source : **UGC**

Discipline : **Social Science**

Subject : **Social Sciences (all)**

Focus Subject : Cultural Studies

Publisher : Marubhumi Shodh Sansthan, Sri Dungargarh (Bikaner)

पालीवालों का लेख युक्त मृत्यु स्मारक (झझू)

श्री गणेशाय नमः समत १७७३ वर्षे
शाके १६३८ प्रवरमाने मह सु
द १३ देवो।। च।। सुमवासुरे।। व्रा.
कलण।। व्राहमणी कवराई।।
तत्र पोत्र।। राम।। देवल उध
रत।। पुन्यकृत।। कल्याण
मस्तु।। ककमदे .....

यह मृत्यु स्मारक झझू कस्बा (तहसील-कोलायत, बीकानेर) के मुख्य बाजार में स्थित द्वियुग्म छतरियों के परिसर में प्रतिष्ठापित अठारह पुण्य मृत्यु स्मारकों की वीथिका में से एक है। इस स्मारक पर उद्धृत लेख का तिथि अंकन वि.सं. 1773 तथा शक संवत 1638 की माघ सुदी 13 है, यह स्मारक पालीवाल ब्राह्मण कलण व उसकी धर्मपत्नी कवराई की पुण्यस्मृति में उसके पौत्र राम द्वारा बनवाया गया था। उक्त लेख जैसलमेर के पीतवर्णीय पत्थर पर उत्कीर्ण है, जिसमें पुरुष एवं स्त्री का युग्म हाथ जोड़ने की मुद्रा में है एवं सूर्य एवं चंद्रमा क्रमशः बाएँ और दाएं ओर अंकित है। दोनों की वेशभूषा भारतीय शैली की है एवं दोनों के सिर पर मुकुट दृष्टव्य है।

अनुवादक : **डॉ. राजेन्द्र कुमार**

संपादकीय

मरुभूमि शोध संस्थान गत 25 वर्षों से **जूनी ख्यात** शोध पत्रिका का छमाही के आधार पर प्रतिवर्ष दो अंकों का प्रकाशन कर रहा है। शोध पत्रिका पूर्व में इतिहास, कला एवं संस्कृति से सम्बद्ध विभिन्न पक्षों पर आधारित शोध पत्रों का प्रतिनिधित्व करता रहा है। लेकिन अब इसके दायरे को व्यापक करते हुए सामाजिक विज्ञान के अन्य विषयों जैसे राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र एवं शिक्षा विज्ञान आदि के शोध आलेखों को भी स्थान दिया जावेगा। शोध पत्र के स्तर को जांचने-परखने के पश्चात् ही उसे इस पत्रिका में प्रकाशित किया जाता है। संभवतः इसकी गुणवत्ता को बनाये रखने के परिणामस्वरूप ही इस पत्रिका को **यू.जी.सी. की केयर सूची** में स्थान प्राप्त हुआ है। यू.जी.सी. द्वारा निर्धारित मानकों के आधार पर संस्थान द्वारा यह दूसरा अंक प्रकाशित किया जा रहा है। इस अंक में विशेष रूप से शिक्षा सम्बन्धी विचारों एवं परिकल्पनाओं को संकलित करने का प्रयास किया गया है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली को सुदृढ़ता प्रदान करने में सहायक की भूमिका निभा रहे सोशल मीडिया एवं डिजिटल तकनीकी को मद्देनजर रखते हुए ऐसे आलेखों को चयनित किया है जो यह विचार प्रस्तुत करते हैं कि भारतीय संस्कृति के मूल्यों को बनाये रखते हुए किस प्रकार तकनीकी शिक्षा के माध्यम से सबको लाभान्वित किया जा सके। इसी अनुक्रम में, डिजिटाईजेशन के बढ़ते उपयोग की आवश्यकता का समर्थन करने वाले दो शोधपत्रों की इस अंक में सहभागिता है साथ ही भारतीय संस्कृति में शिक्षा के बदलते मूल्य एवं स्वरूप की चर्चा करते हुए उच्च शिक्षा में भारतीय परंपरागत शिक्षा प्रणाली की महती आवश्यकता पर बल देने वाले मूल्यपरक शोध पत्रों का इसमें समावेशन किया गया है।

इस अंक में प्रकाशित शोधपत्रों के माध्यम से लेखकों ने अपने विद्वत विचारों को साझा करते हुए शिक्षा की विभिन्न नवीन विधाओं के स्वरूप, उनके बढ़ते उपयोग एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उनकी सार्थकता से परिचित करवाया है। हम उनके इस अमूल्य योगदान के प्रति उनका आभार व्यक्त करते हैं।

सम्पादक

डॉ. बी. एल. भादानी

अनुक्रम

- Pedagogical Interventions Through E-resources 7-17
  - *Dr. Zeba IIyas*
- The Wounds of Partition on Women 18-30
  - *Shabana Ahmed* • *Abha Pal*
- Common Service Centre (CSC) : In Pursuit of Digital Governance 31-44
  - *Dr. Asfiya Karimi* • *Prof. Abdul Matin*
- तीर्थ राज पुष्कर : ऐतिहासिक व सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में 45-51
  - *डॉ. कंचन शर्मा*
- झारखण्ड में नक्सल समस्या : गाँधीय समाधान 52-59
  - *डॉ. सतीश कुमार वर्मा*
- भारतीय संस्कृति में निहित पर्यावरण संदेश 60-66
  - *डॉ. रमा शर्मा*
- भारतीय संस्कृति में अहिंसा व शांति शिक्षा की प्रासंगिकता 67-74
  - *डॉ. अविनाश पारीक*
- उच्च शिक्षा में राष्ट्रीय संस्कृति के समावेशन हेतु विषय वस्तु 75-85
  - *डॉ. सरिता शर्मा*
- शैक्षिक प्रक्रिया में निर्देशन एवं परामर्श 86-93
  - *डॉ. महेश कुमार शर्मा*

पुस्तक समीक्षा

- ललित शर्मा : हाड़ौती की जैन मूर्तिकला एवं शिलालेख 94-96
  - *समीक्षक : डॉ. राजेन्द्र कुमार*

Pedagogical Interventions Through E-resources

• **Dr. Zeba Ilyas**

The use of 'e' resources has made significant changes in the pedagogy of teaching learning. The concept of teaching & learning with chalk and talk with in the four wall of the classroom has become outdated and being replaced by the use of modern electronic tools and devices. E-resources are essentially a powerful tool of teaching learning. In the era of the globalization the learner may not afford to confine his/her knowledge with the text books which are available to him in the library rather he has to use the learning resources abundant outside the boundaries of even a particular nation. Hence, geographical boundaries have ceased to become the limitation to acquire knowledge for the learners. "E-learning is an effective mode for teachers to motivate and individualize learning while increasing their own classroom productivity"[1].

The concept of 'anywhere is most appropriate for the various educational technologies which are prevalent among today's learners. The world has become global village and the learner may access any information or knowledge available at any part of the world sitting anywhere. "….education is changing in terms of what, where, how and why students learn and who they learn from and digital technologies are impacting education" (Net Safe and Ministry of Education, New Zealand 2015). Indian higher education system has one of largest education network of universities and colleges. This paper aims to assess whether the faculty teaching in these institutions of higher learning are well versed with the e-resources which is the necessary for a teacher to achieve his/ her teaching objectives to optimal satisfaction and also to develop

among learners high order thinking skill to make the knowledge provided by teachers useful for their daily/professional life.

E resources, in fact have emerged as a potential source of learning in almost all the disciplines across the globe. It is through the use of e- resources that the time boundaries have also being removed as the students may acquire the knowledge anytime. 'Anytime' is an essential feature of information and communication technology which allows the learner to access the information at any point of time as per his/her convenience. "One of the key factors of e-learning is that learners can access education at almost any time from any location"[2]. The information which was available through the teacher with in the time frame of the school/college has now enabled the learner to develop learning even after school hours.

E resources are generally used by those students who apart from the conventional resources wish to enrich their regular classroom activities. It provides them additional learning material even beyond their regular classroom resources. It also facilitates easy communication between teachers and students.

"Electronic resources (e-resources) are those materials that require computer access, whether through a personal computer, mainframe, or handled mobile device. They may either be accessed remotely via the internet or locally"[3]. An e-resource is a resource that requires computer or any other electronic gadget that stores huge data for the onward transmission for the ultimate use by a learner, teacher or manager.

"E-resources (e-resources) is that information (usually a file) which can be stored in formal Electrical signal, but not merely a computer".

Types of e-resources are basically divided in two major types-

1. Online e-resources – e-journals, e-books, online data base, websites etc.
2. Other electronic resources–CD ROMS, diskettes, other computer base.

There is a variety of issues which are involved in teaching learning through latest technological tools and techniques including the use of e-resources. However, "many teachers lack ample

understanding of such issues, and they often face problems in relation to the integration of technology in everyday teaching practices".[4] "New teachers often face challenges in designing technology-based teaching learning activities".[5]

In a number of disciplines, due to lack of required number and qualified faculty, it requires that the institutions have large number of e-resources in their libraries so that the shortage of teachers is compensated to provide the e-resources to the learners. The situation is more prevalent in private institutions where the highly qualified faculty is not attracted due to largely low salary structure and lack of conducive teaching learning environment.

UNESCO described e learning as the "tool and the processes to access, retrieve, store, organise, manipulate, produce, present and exchange information by electronic and other automated means". These include the devices, hardware, digital cameras, phones, faxes, modems, CD, DVD players and recorders, digitised videos/radio and TV programmes and multimedia programmes".

Today is an era of cut throat competition, where the students regardless of the discipline, level or subject, have to prove their excellence over the others so that the market industry may offer them a suitable position. The industry in turn, expects high quality of services and products from these incumbents to satisfy the market demand. Today's market has gone remarkable change due to very advanced technology which has not only changed the taste of the buyers but requires frequent changes in the market products and services. This scenario has created challenges for the service producers, government organisations, judiciary, teaching organisations and the other employers. The high expectations of the industry and the prospective learners who are the prospective employees also needs to be addressed by the colleges and the universities by introducing latest technological resources which need to be integrated in teaching learning process. E-resources which are the outcome of deeply researched latest technology should be procured by the educational institutions to equip the teachers and the taught in a manner that the challenges of local and the global industry are addressed. "When a teacher is using digital

resources or internet his role becomes very significant. S/he cannot be mere communicator of information, but there is a need to be an active facilitator arranging the learning situation and scaffolding the learners in such a way that it will lead to fruitful and meaningful learning".[6]

The institutions of higher learning have to assume this responsibility of preparing teachers and the learners well equipped to use e-resources meaningfully so that the modern industries and all other organisations which may be the employers of these highly skilled manpower may utilise their skills, knowledge and competence in highly productive manner.

The researcher being teacher and teacher educator has a greater responsibility towards the learners and their education to be of high quality and wishes that the pass outs are engaged in any profession to provide meaningful service to the organisation to satisfy the needs of the employers as well as of the ultimate users of the services. This is possible only when these learners (pass outs of the colleges and universities) are trained to use e-resources during their education and also even after being employed for the future professional development by updating the skills and knowledge in the fast changing world. This necessitates that these teachers are not only aware of various e-resources but they also integrate such resources in the teaching learning process. "Availability of quality material online elevates teacher education. It is possible to create digital environment to make easy teaching techniques like role paly across time and distance.[7]

Thus the investigator conducted a study to find out whether the teachers are aware of such resources and that to what extend they are making use of e-resources in their teaching:

The following objectives have been formulated:

- To ascertain the level of awareness about the various e-resources by the teachers of different disciplines in higher education
- To find out the level of their use in teaching learning process
- To compare the use of e-resources among the faculty of various disciplines

Research methodology-Survey and descriptive method of research was used.

Sample-The investigator selected 150 teachers from various disciplines from colleges in Delhi, teaching at undergraduate level i.e. 30 from each discipline, such as; B.Tech., B.Ed., Humanities and Languages (English only), Social Sciences and Commerce.

Tools of Data Collection : A Check list of software and hardware was developed for the teachers and they were asked about their awareness of e-resources given in the check list. The check list was prepared consulting the list of the e-resources published by UNESCO. However, some modifications were made consulting few latest research studies in the area.

Another check list was also developed by the researcher keeping in view the prevalent e-resources being used in teaching learning in the Indian context, to ascertain as to what extent the e-resources are being used by sampled group of teachers.

Analysis of the data: Analysis of the data was done qualitatively by using percentage to show the responses of the teachers. The data depicted in the following tables are the responses of the overall respondents (all disciplines):

Table 1. Awareness of Teachers About The Hardware

Contents	Fully aware	Partially aware	Not aware
Wi fi	150	–	–
Modem	105	18	27
CDs/ DVDs	150	–	–
CD ROMs	120	–	30
Portal	90	36	15
Digital camera	150	–	–
Digital Library	120	–	30
Web publishing	120	–	30

Contents	Fully aware	Partially aware	Not aware
e-mail publishing	150		
Print on demand	–	–	–
Smart Class	150	–	–
Desktop	150		
Tablets	150		
Hard disk drives	129	–	21
Routers	30	–	120
Sensors	90		60
Memory cards	150	–	–
Flash drives	87		63
Data projectors	90	–	60

Table 1 : Indicates that 100 % teacher respondents are fully aware of wi-fi, CD/DVD, digital camera, e-mail publishing, smart class , Desktop, Tablet and memory card which are the important e-resources. About 70% are well aware of the modem, 60 % are aware about portal, censors and data projectors, while 8% are aware of digital library and web publishing and 60% each about censors and data projectors . It is again found that the 79% teachers are well aware of CD ROMs and 86 % are aware of Hard Disk Drive. Remarkably 86% are not aware of routers.

Table 2. Awareness of Teachers About Soft Ware

	Fully aware	Partially aware	Not aware
e- journal	150	–	–
e- books	150	–	–
internet	150	–	–
Blogs	96	21	33
Online data base	60	30	30

	Fully aware	Partially aware	Not aware
Electronic link	105	19	26
T PACK	53		97
e- module	113	–	37
PPT	150	–	–
Whatts Ap	150	–	–
SMS	150	–	–
You tube	138	1	11
Simulations	45		105
Chats	90		60
I Cloud	60		90
Google Scholar	120	15	15
Zoomerang	15		135

Table 2 : Discloses the awareness of the teachers about the software which are used in teaching learning. The responses of the teachers indicate that 100% teachers are well aware about the e-journal, e-books, internet, PPT, WhatsApp and sms. About the awareness of Blogs, electronic link, e-module, You tube and Google scholar and chats, was found to be 64%, 70%, 75%, 92%, 80% and 60% respectively. Awareness about some of the software is below 50% which include Online data base (40%), T Pack (35%), I Cloud (40%) and Zoomerang (10%).

Table 3 : Responses of Teachers About The Usage of Software

	Frequently	often	Rarely	Never
Internet	150	–	–	–
PPT	150			
e- journal	45	–	90	15
e- books	41	–	18	91
CD ROMs	15	–	–	135

	Frequently	often	Rarely	Never
Whatts App	123	27	–	–
SMS	150	–		
Blogs	96	–	14	40
Online data base	30	2	110	10
Electronic link	90	9	21	30
T PACK	44	12	78	16
Smart classroom	53	24	42	31
e- module	42	18	–	90
Digital libray	57	39	54	–
You tube	33	35	–	82
Simulations	44	11	–	93
Chats	19	–	26	105
I Cloud	18	–	–	132
Google Scholar	83	37	15	15
Zoomerang	65	–	–	85

Table 3 : Shows the responses of faculty about the use of the software in their classroom teaching.

It was noticed that the internet, Power point presentation and SMS are used very frequently by the 100 % teachers in their teaching. The software like Whatts App, Blogs, Electronic link, e module and Google Scholar are used frequently by more than 50 % teachers. Approximately between 20% to 44 % faculty responded that they use e-books, On line Data Base, T–PACK,

Smart classroom, Digital library and Youtube in teaching-learning process very frequently. Disappointingly CD ROMS, Chats and I–Cloud are used merely by 10%, 13% and 12% teachers respectively.

However, it was responded by the sampled teachers that CD ROMS, e-books, Youtube, Chats, I–Cloud and Zoomerang are never used by 135 (90%), 91 (61%),82 (55%), 105 (70%), 132 (88%), and 85 (57%) over all teachers respectively.

Table 4 : Responses of Discipline Wise Teachers About The Usage of Software

	B.Tech	B.Ed.	Lang.& Soc. Sc.	Science	Commerce
Internet	30	30	30	30	30
PPT	30	30	30	30	30
e- journal	18	05	03	10	9
e- books	17	02	–	13	9
CD ROMs	11	2	–	2	–
WhatsApp	30	30	30	30	30
SMS	30	30	30	30	30
Blogs	28	16	08	20	18
Online data base	18	6	–	6	2
Electronic link	30	18	4	20	27
T-PACK	7	21	9	10	9
Smart classroom	27	16	8	15	11
e- module	28	21	–	7	4
Digital library	27	14	8	24	23
Youtube	20	9	7	18	14
Simulations	12	7	3	12	10
Chats	11	1	7	–	–
I-Cloud	9	–	–	5	4
Google Scholar	30	30	18	23	19

Table 4 : Shows a comparative view of the usage of software by the teachers of different disciplines in their teaching learning**. It is to note that the responses as using 'Frequently' and 'Often' given in Table 3 have been clubbed together.** The data disclose that 100% teachers across the various disciplines are using internet, PPT, whatsApp and SMS. However, a marked difference was noted in the use of Blog, electronic link, smart class, e-module digital library and Google scholar which are used by almost all the faculty teaching to B.Tech., followed by Science teachers and Commerce Teachers. Teacher educators (teaching in school teacher preparation programmes) are good in using T-PACK and e-module and equally good in Blogs and using smart class which they

are using more frequently than teachers of Humanities and languages and Commerce faculty.

Discussion and Conclusion

There seems to be a vast diversity among teachers of various disciplines regarding the awareness and the use of e-resources in teaching learning. As is evident from the data, it is apparent that the teachers engaged in teaching of Engineering and Technology classes are more articulated and are in use of e-resources in their teaching followed by science and commerce teachers as a whole. However, there is one fact which also emerges from the data that the teacher educators (the teachers who are in school teacher preparing discipline) are doing exceptionally well in some dimensions of e-resources such as; e-module, T-PACK (more than even engineering faculty), Smart Class and Google scholar, which they are doing more frequently in comparison to the faculty of other disciplines. The teachers who are lagging behind either about awareness or the use of e-resources may be due to either non-availability of some resources or it may be due to lack of technological skills among teachers. In case of faculty not using the technology, Ansari and Bhatia have attributed to lack of appropriate training atmosphere at pre-service and in-service training stages.[8] Both the factors hold ground and invite special attention of the management of the institutions. It necessitates, firstly, the management makes sure that these resources are made available, secondly, to equip teachers in technological skills to make meaningful use of e-resources, the management needs to organise frequent training programmes so that teachers are not only trained in the technology use but also the motivational aspect of teachers is also taken care of.

On the other hand, faculty also has a responsibility to prepare their students to face future challenges of their profession and the personal lives. Hence, they also should not leave any stone unturned to make themselves techno friendly to transmit their skills and competencies to their students. Although the findings of the study may not be generalised over entire population due to inadequate sample but the trend is alarming and needs due attention of the

management of the institutions and the policy makers that during the era of globalisation and the industry requirement no compromise with the technology is possible.

References :

1. Saxena, V. (2016): E-Learning Environments: Strengthening Inclusion in Schools, Jamia Journal of Education- An International Biannual Publication , Vol. 3 Number 1
2. Brokop, F. (2008) : Accessibility of e-learning of persons with Disability: Strategies, Guidelines and Standards. E campus, Albrta and North Quest College.
3. IFLA World Library and Information Congress (2012): Retrieved from http://Conference ilfa organised at August 2016.
4. Phelps, R., & Ellis, A. (2002). The Australasian Society for COMPUTERS In Learning in Tertiary Education. Auckland, New Zealand ASCILITE.
5. Lubin, I., & Ge, X. (2012); Investigating the influences of LEAPS model on pre service teachers' problem solving, meta cognition in an educational technology course. Education Technology Research Development, 60(2), 239-270.
6. Husain & Ankita (2017): "National Policy on ICT in School Education : A Critical Analysis", Jamia Journal of Education – A Peer Reviewed Refreed International Biannual Publication Vol. 3, No. 2
7. Ilyas, Zeba (2019):Jamia Journal of Education –A Peer Reviewed Refreed International Biannual Publication Vol. 5 No. 2
8. Ansari, Imran & Bhatia, Harjeet Kaur (2019): The Pre Service Science Teachers Technological Pedagogical Content Knowledge (TPACK) and effective ICT Integration.

Dr. Zeba Ilyas

Assistant professor,

Al-falah University, Faridabad, Haryana

E- mail ID zeeba.ahmed5gmail.com

❑❑❑

The Wounds of Partition on Women

- **Shabana Ahmed**
- **Prof. Abha Pal**

Suffering comes in the share of women whether war or peace. Conditions worsen in war or in any abnormal situations, partition of India was one such condition. The country, the leaders were half happy and half sad. Happy, because after a long fight for independence they ultimately attained it. Sad, because independence came with a big wound on mother India's heart. Mother India is symbolic of every Indian girl and women who suffered injuries, pain and trauma. It is the women who suffers the most. Molestations, rape, abductions, kidnapping come in her lap in such situations. All these happened in 1947 with independence – a wound on Mother India's heart.[1]

Independence thus marked an end of one phase and the beginning of another in modern Indian history. This date not only comes with the mixture of charm and sadness.[2]

The partition of India represented a division of the subcontinent, India and Pakistan. This specified Muslims for Pakistan and India for Hindus and Sikhs.[3] When the news of partition was officially come to an existence, it signaled by hundreds of fires in various part of the city.[4] Hindus and Sikhs those who were in Pakistan at that time felt that they were trapped in that area, and the same felt by Muslims, who were in India. This partition lead to the greatest migrations in the history of the world.[5]

More than ten millions people from both sides had crossed the border. Some people were happy, while many had left their land unwantedly. For them it was a horrible experience to give up their belongings and properties and rush to a land which was not theirs.[6]

Acharya Kriplani, who was then the President of Congress said, our national organization had taken a decision in favor of partition but the entire people grieved over partition.[7]

A new India was born but she was like a woman in travail. From the very next day of independence communal trouble began in various parts of the country, and across the border too. In the east Punjab, Hindu and Sikh mobs had attacked Muslims. They were burning houses and killing innocent men, women and children. Exactly the same report had been coming from the west Punjab, where Muslims mobs were killing the other communities people.[8]

There was an overwhelming amount of violence throughout the country because of this millions of people lost their lives in the riots. According to the British, estimation 2,00,000 had post life. While Indian estimate reaches upto two millions. Due to the tragic event partition nearly eighteen millions were up-rooted from their homes and household and become refugees.[9]

Khushwant Singh In the novel Train to Pakistan, portrays the reality of the situation by laying the blame of the horrible tragedy upon both the communities, he said, Muslims said that the Hindus and Sikhs together planned and started killing, on the other hand, Hindus and Sikhs had put the blame on the Muslims.[10]

Partition was the darkest period of Indian history. Riots brought out the brutality, inhumanity in a very massive scale. From both sides many people were killed, as killing and looting were the common scene. People were stabbed, tortured and women raped. Their homes were destroyed and consequently villages were abandoned.[11]

About partition, Mountbatten said, 'it is sheer madness', and 'no one would ever induce me to agree to it were it not for this fantastic communal madness that has seized everybody and leaves no other course open'. The responsibility for this mad decision, must be placed 'squarely on Indian shoulders in the eyes of the world, for one day they will bitterly regret the decision they are about to make.[12]

Communities which had lived side by side for generation to

generations fell upon each other in a revel of abhorrence. It was not a war or civil war; it was the reason of shocking collapse of a society.[13]

The worst sufferer of partition were the women. There was widespread sexual savagery, about 75,000 women were thought to have been abducted and raped by men of different religion from their own, and sometimes by men of their own religion.[14]

The attacks on women were made on different reasons. Firstly, the women denote the symbols of the community honor and secondly, their bodies are site of community reproduction. They felt that by dishonoring a woman, they can be dishonoring the religion of other community.[15] Because of this reason rape was used as a weapon not only to humiliate the women but also to see one's seed into the enemies' womb. These women were forced to undergo abortion or killed by their own people to maintain the purity of the community.[16]

This type thinking had made the situation more critical. This made the men, an animal or a type of zombie. They forget the real meaning of humanity and the teachings of religion, that teach us to respect and honor the women, as they represent goddess or the *Rehmat* of Allah. Women of both side suffered the worse than death. They were raped, tortured, sold, gang raped in front of their families and relatives, children were killed in front of their parents. Parading naked women throughout the town and villages, branding the breast and genitalia with slogans like Pakistan Zindabad or Hindustan Zindabad and symbol of Hindu, like *Swastik* and *Om* or Islamic sign, Like crescent Moon, star or Sword. There is no doubt that inhumanity was dancing on the name of God, whose teaching was misinterpreted by everyone at that time.[17]

Abduction and rape were common at that time. The worst thing was that the abducted women were often sold changed hands and used as a subject. Anis Kidwai annals that in 1949, 75% of girls from both side were sold from one man to another. Their youth and virginity was sold in the hands of lustful men, only for money.[18]

Leonard Mosley gives a brutal picture of the partition riots, he says that within nine months between August 1946 and the spring

of the following years, almost 14 to 16 million of Hindus, Sikhs and Muslims were forced to leave their homes and flee for safety from blood crazed mobs. Six lakhs people were killed. They were not just killed; they were brutally killed. The mobs did not show any mercy to the children, they were picked up by their feet and their heads was smashed on the wall. If they were female children, then they were raped and then their breast was chopped off. If the women were pregnant they were disemboweled.[19]

Women of all community, classes and ages were victimized. In many tragic cases, men fearing that their daughters or female relatives would soon be raped, forced them to commit suicide, and in some cases they themselves killed them to protect the honor of their family and religion, and also killed them to save them from the pain, they will face if they survived. Those women who were raped and abducted but still survived would be faced worst problems. They were boycotted by their own family and relatives, as they were impure now. Without finding any option they used to commit sucide.[20]

In some cases, these rape victims married to their rapists, converted their own religion. But this is not the end, some of them faced worst condition as they were sent to the work of prostitution where they got disappeared and lost into oblivion.[21]

Violence is almost instigated by men, but its greatest victim is woman. In violent conflict, woman is raped, woman who is widowed, woman whose children and husband are sacrificed in the name of partition and religion. It was only the strength of those women who survived in that scenario and built a new future from ashes and move on in life. This passage from an activist's pamphlet explains in a very emotional manner,

I am a woman

I want to raise my voice

Because communalism affects me

In every communal riots

My sisters are raped, my children are killed

My men are targeted

My world is destroyed and then

I am left to pick up the pieces

To make a new life

It matters little of I am a Muslim, Hindu or Sikh

And yet I cannot help my sisters for fear that I may be killed or that they may be harm us.[22]

The fear of dishonor or rape is bigger than the fear of death. The woman during the partition days were passing through that fear is shown in the above poem. Hindu, Muslim or Sikh were the main targets and whether they belong to upper class or lower, it was immaterial. A woman to them was a woman a body and flesh!!!!

Here are a few stories, a real stories of atrocities on women which tell us that men of higher social classes were equally taking advantage we can't blame only the lower classes for crimes like abductions and rapes etc.

On the night of August 25, 1947, two daintily teenaged girls, daughter of a Muslim lawyer of Hissar were on their way to Delhi by train to join the refugee convoy going to Pakistan. One gang attacked them and dragged the girls out of the train, and took them to P.W.D rest house, where they were repeatedly raped by Magistrate and his accomplice.[23]

In other story, an observer who watched the column of Muslim refugees. Those were going from Kapurthala to Julundhur said that the column was guarded by a few military persons. In these column women and children walked in the Centre. Every time a group of gang attacked and took some girls and women and raped them. They also injured those people, who tried to protect those women and girls. The military persons were unable to protect them all. When the column arrived at Julundhur, almost all the women and young girls had been kidnapped.[24]

In another incident at Lahore, on September 25, a Muslim mob attacked a Sikh and Hindu refugees train at Kamoka, killed three hundred and fifty people and wounding two hundred and fifty people. About thousand women were recovered from Shekhupura district by military evacuation. [25]

Anis Kidwai wrote in his book, *Azadi Ki Chhaon* Mein that, in some places, women were not safe with Police too. The Police were appointed to protect them, but in some cases these Police men committed the worst crime. Anis Kidwai wrote that in some places beautiful girls were distributed among the Police and Army personals, and other were to the attackers. These girls went from one hand to another, and after being sold four or five times, these women become some showpieces in Hotels, or kept in custody in the house for enjoyment.[26]

Here is a story of west Punjab, where two Assistant Sub-inspectors of Police went to recover some non-Muslim woman from a village. On the way these women were cruelly raped by them.[27]

Newspaper reports furnished more details about the 'serious disturbance' that had broken out at Peshawar engineered by an 'armed mob' from Kohat and the Dandi Kotal trans border areas. The mob had attacked 'a large number' of Hindus and Sikhs and looted their property which, along with a retinue of women, was carried in a convoy of motor vehicles and on donkeys.[28]

Murders, abductions and conversion became common scene. No community lagged behind. Ethics and morals took the back seat and criminalization of human instinct assumed prominence. There had been 'a steadily increasing' number of attacks on Hindu, Sikhs and Muslims. Some were isolated incidents, while other were organized.

The government of India and Pakistan decided to prepare a Joint Evacuation Movement Plan (JEM) on October 20,1947.The JEM plan arranged for rail evacuation with contributions from India and Pakistan of 20 & 30 railway trains respectively or a pool of stocks for evacuee's movement.[29]

These refugee trains were known as 'India Special' or 'Pakistan Special'.[30] The evacuee's train was started to evacuate the people, it served an altogether different purpose for attackers. Instead of launching random attacks, now one could indulge in 'wholesale slaughter' because these train carried members of a single community. Whenever a ghost train laden with dead bodies arrived on one side another would immediately be sent in the opposite direction. Several train were attacked.[31]

K.L Gauha has given the approximate figures of women abducted and raped and also of the children. It is given in the chart below.[32]

Abducted	West Punjab	1 Lakh (Approx.)
	East Punjab	50,000 (Approx.)
Raped	West Punjab	50,000 (Approx.)
	East Punjab	NA
Children	Murdered and maimed for life	1 Lakh (Approx.)

The Governments of India and Pakistan who had just taken over from the British, had no comprehension of the enormity of the situation. Though Military Evacuee Organization and Liaison Agencies had been established in both the Punjab's in September, 1947, nothing was done at the Government level to alleviate the suffering of the abducted women until 6th December, 1947. Following agreement was made between governments of India and Pakistan regarding recovery of abducted women.[33]

The agreement arrived at between the two nations was known as the inter Dominion Treaty, which was later enacted as an Act of Parliament. The terms of the treaty were clear: Women of both sides of the border who had been abducted were to be forcibly recovered and restored to their families. Some of the clauses were as follows:

Every effort must be made to recover and restore abducted women and children.Conversions by persons abducted after March 1947 will not be recognized and all such persons must be restored to their respective Dominions. The primary responsibility for recovery of abducted people will rest with the local police who must put full effort in this matter. Good work done by police officers in this respect will be rewarded by promotion or cast awards.Social workers will look after camp arrangements and receive the abducted persons in their own Dominions. They will also collect full information required about persons to be recovered

and supply it to the Inspector General of police and the local Superintendent of Police.[34]

Official machinery was established for recovery of abducted women in both sides. In the East Punjab, Miss Mridula Sarabhai and Mrs. Bhag Mehta organized women workers for recovery work.[35]

In all, approximately 30,000 Muslims and non-Muslims, women were recovered by both countries over an eight years' duration. Although most of the recoveries were carried out between 1947 and 1952, women were being repatriated to both the countries as late as 1956, and the Act was renewed in India every year till 1957, when it was about to lapse.[36]

The most peculiar phenomenon with regard to the recovery work of women was that their abducted girls very often refused to be evacuated. They were too afraid and felt helpless, under the circumstances, some of them really believed that their husbands and other relatives had failed to protect them and hence they had lost all rights over them. Delay was yet another major factor impeding their recoveries "near and dear ones had all been murdered", etc. One of them said to the District Liaison Officer, Gujranwala, "How can I believe that your Military strength of two sepoys could safely take me across to India when a hundred sepoys had failed to protect us and our people who were massacred." Another said, "I have lost my husband and have now gone in for another. You want me to go to India where I have got nobody and of course, you do not expect me to change husbands every day." A third said, "But why are you particular to take me to India? What is left in me now- religion or chastity?[37]

Anis Kidwai writes in his book that, it was too late for them to choose India or Pakistan. She is about to become a mother, or she has been through several hands. After seeing so many men's faces, this daughter of Hindustan, how will she ever look at the faces of her parents, her husbands?"[38]

Both Mahatma Gandhi and Pandit Jawaharlal Nehru had appealed to the people to take the women back into their family fold. In a public appeal made in January, 1948 Pandit Jawaharlal

Nehru Says that, "I am told that sometimes there is an unwillingness on the part of their relatives to accept those girls and women in their homes. This is a most objectionable and wrong attitude to take up. Those girls and women require our tender and loving care and their relatives should be proud to take them back and give them every help."[39]

Similarly, Mahatma Gandhi Says : "I hear women have this objection that Hindus are not willing to accept back the recovered women because they say that they have become impure. I feel this is a matter of great shame. That women are as pure as the girls who are sitting by my side. And if any one of these recovered women should come to me, then I will give them as much respect and honor as I accord to these young maidens."[40]

As per the 1951 population census in India and Pakistan, the total number of displaced persons in the two countries was found to be 15.63mn. the evacuee's population in India was estimated as 7.48mn against 7.15mn in Pakistan.[41]

According to Maulana Azad, partition of India was the wrong decision. In India Wins Freedom he said that if the right solution of the Indian problem could not found by August 15, why take the wrong decision and sorrow over it. He said that he had done his best but his colleagues unfortunately did not support him. The only explanation he finds for their strange blindness to facts is that anger or despair had clouded their vision. Perhaps also the fixation of a date – August 15 – acted like a charm and hypnotized them into accepting whatever Lord Mountbatten said.[42]

When we looked at the country immediately before and after partition, we found that the acceptance was only in a resolution of the Working Committee of the Congress and on the register of the Muslim League. The people of India had not accepted partition. In fact, their heart and soul rebelled against the very idea. Muslim League enjoyed the support of many Indian Muslims but there was a large section in the community who had always opposed the league. As for the Hindus and Sikhs, they were opposed to partition. Even the Muslims who were the followers of the Muslim League were horrified by the result and started to say openly that this was not what they had meant by partition.[43]

Conclusion

Communal riots are a big threat to our national unity. Riots result in a large scale violence and loot. They have always resulted in a lot of bloodshed and destruction. As we all knows Indian independence come with the agony of partition, and the partition makes man a wolf to man and was out to kill and destroy. Millions of people died due to this. It is very important that we should learn from this. That peace and humanity are the only religion which we should have to follow. In a peaceful environment all good things are possible, where as in the absence of peace, we cannot achieve anything of a positive nature, either as individuals, or as a community, or even at a national or international level.

The partition created complex problems for the people of India. The people were butchered mercilessly on a massive scale. The women were becoming the soft target physically and psychologically. It is not at all surprising that this bloodiest upheaval in history that claimed innumerable innocent lives and loss of property produced great impact on the minds of all the people of the sub-continent. Women of both side had paid the price of Independence by losing their own Independence and womanhood. They were subjected to maximum humiliation and torture. We forget that women constitute one-half of the population of the world and they play a significant role in the society. It is very important to give them respect and protect her.

I will end my paper with two short stories, which tell us that there was a silver lining even in the darkest cloud. There were some very rare heartening episodes of noble deeds. In many cases the policeman of West Punjab committed excesses on women, but one example of a Police constable was rare exception. Fateh Mohammed, a Musim Police Constable, took one Sikh Girl, 16-year-old, whose parents had been murdered in the communal riots, to his house. After taking a copy of the Holy Koran which was lying in his house, he swore before his young daughters, wife and aged mother that he would treat that girl as his own daughter. He kept his vow and served that girl for a number of months. He made an earnest effort to locate his relations in East Punjab. Ultimately, he

was able to find her brother, who came to Lahore to take her, in the office of Chief Liaison Officer, East Punjab, and she gave the detailed statement how she looked after by Fateh Mohammed. Her statement is preserved in East Punjab Liaison Agency Records No. LV-26-ES.[44]

Similarly, S.Narain Singh of Bathinda area gave shelter to a Muslim girl of tender age whose parents had been murdered during the communal riots. He got her admitted in the school along with his grand daughters. When she came up to the age of marriage, he was able to locate one distant relative of her through the Pakistan High Commissioner's office. He also prepared dowry articles for her marriage. The dowry was handed to her at the time of farewell to that girl on the Indo-Pak border. The episode was published in the New York Times, USA, Under the title "Sweetest Revenge."[45]

The biggest price of Independence was paid by women-partition came as an inevitable part of Independence and partition created a havoc on women. No one should ever forget what happened then, on women, and take lesson from history because it is rightly said "Forgotten History Repeats."

References

1. Maulana Abul Kalam Azad, *India Wins Freedom: The Complete Version*, Orient Longman, New Delhi, 1992, p. 224
2. Ibid., pp. 227-28
3. S. Settar, Indra, B. Gupta, *Pangs of Partition: The Parting of Ways*, Manohar Publishers, New Delhi, 2002, p. 76
4. Maulana Abul Kalam Azad, op. cit., p. 225
5. B.N, Pande, "A Centenary History of Indian National Congress: 1947-64", Vol. IV, Academic Foundation, New Delhi, 2001, p. xxxiii (introduction)
6. Butalia, Urvashi, *The Other Side of Silence : Voice from the Partition of India*, Viking Publications, New Delhi, 1998, p. 1
7. Maulana Abul Kalam Azad, op. cit., p. 226
8. Padmasha Jha, *Maulana Abul Kalam and The Nation*, Rajesh Publications, New Delhi, 1998, p. 6
9. Urvashi Butalia, op. cit., p. 1

10. Khushwant Singh, *Train to Pakistan*, Grove Press, New York, 1990, p. 9
11. Urvashi Butalia, op. cit., p. 7
12. Larry Collins, Lappierre Dominique, *Freedom at Midnight*, Vikas Publishing House, Delhi, 1976, p. 120
13. Urvashi Butalia, op. cit., p. 1
14. S Gopal (ed.), "Selected Work of Jawaharlal Nehru", Vol. IV, Oxford University Press, New Delhi, 1987, p. 660
15. Ritu Menon, Kamla Basin, *Borders and Boundaries : Women in India's Partition*, Rutgers University Press, New Delhi, 1998, p. 36
16. S Gopal, op.cit., p.660
17. Anis Kidwai, *Azadi Ki Chaon Mein*, National Book Trust, Delhi, 1990, pp. 142-143
18. Leonard Mosley, *The Last Day of British Raj*, Weidenfield and Nicolson, London, 1961, p. 9
19. Taisha Abraham (ed.), *Women and The Politics of Violence*, Haranand Publications, New Delhi, 2002, p. 37
20. Ibid., pp. 128-129
21. Anis Kidwai, op. cit., p. 139
22. G.D. Khosla, *Stern Reckoning : A Survey of the Events leading up to and following Partiton of India*, Oxford University, New Delhi, 1990, p.289
23. Ibid., p.309
24. Anis Kidwai, op. cit., pp.141-142
25. Virender Grover, Ranjana Arora, (ed.), *Partition of India, Indo-Pak Wars and the UNO*, Deep and Deep Publications, New Delhi, 1998, p.14
26. *The Hindustan Times*, September 2, 1947, p.2
27. Kripal Singh, *Selected Documents on Partition of Punjab*, National Book Shop, Delhi, 2006, p.550
28. *Tribune*, October 3,1947, p.1
29. "Joint Evacuation Movement Plan, October 20, 1947" published in Kirpan Singh (ed.), Selected Documents on the Partition of Punjab, Haryana and Himachal and India and Pakistan, pp.548-49
30. Virender Grover, Ranjana Arora, op. cit., p.310
31. Ibid., p.12

32. Taisha Abraham, op. cit., pp.140-141
33. Virender Grover, Ranjana Arora, op. cit., p. 12
34. Recovery and Restoration of Abducted Persons in India and Pakistan, Government of India Publications, Ministry of Foreign Affairs, New Delhi, p. 7
35. Virender Grover, Ranjana Arora, op. cit., pp. 15-16
36. Anis Kidwai, op. cit., p. 142-143
37. Abraham, Taisha, op. cit., p. 154
38. Ibid.
39. Verender Grover, Ranjana Arora, op. cit, p. 17
40. Ibid.
41. Kripal Singh, op. cit., p. 180
42. Maulana Abul Kalam Azad, "India Wins Freedom", p. 226
43. Ibid., p. 224
44. Verinder Grover, Ranjana Arora, op. cit., p. 17 & 35.
45. Ibid.

Shabana Ahmed

Prof. Abha Pal

Research Scholar,
S.o.S in History,
Pt. Ravishankar Shukla University,
Raipur

❑❑❑

Common Service Centre (CSC) : In Pursuit of Digital Governance

- **Dr. Asfiya Karimi**
- **Prof. Abdul Matin**

Digital Governance has become a buzz word in the first quarter of the twenty-first century. Governance in general and good governance in particular means providing opportunities and proper delivery of goods and services to the people in a fair, just, effective, responsible and open way with transparency. Digital governance is the effective use of Information and Communication Technology (ICT) for good governance by an improvement in the system of governance that is in place and thus provides better services to the Citizens. Government of India has commitment for digital governance in its pursuit of transforming the country into digital India. In section-I, the paper highlights the digital governance in general. Further, it critically examines the role of CSC as a model of digital governance at the village level in section-II. Primary data from two villages of Uttar Pradesh district. One located in Aligarh and another located in Bhadohi district are taken for understanding the ground level reality through qualitative data, supplemented with quantitative data in a tabular form.

Section I

1. Digital Governance for Good Governance

The aim and objective of the Government of India (henceforth will be referred as GOI)to pursue digital governance is for good governance. The concept governance refers to multiple meanings. There are studies that has discussed about its various meanings.

Matin and Mathur (2003) have pointed out that the word Good Governance has recently come into regular use in political science, public administration in general and development management in particular. The concept has its meaning in democracy, civil society, obligation of human rights, popular participation, social and sustainable development. It was pointed out by the Harare Commonwealth Declaration 1991 that the digital governance intended for the proper implementation of democracy and institution that reflects its democratic transparency, whether in the rule book of law or the transparent judiciary system, and in an honest government, fundamental human rights given by the constitution that includes equal rights and equal opportunity for all, regardless of race, color, creed or political belief. A good governance can be said where the voices of the poorest and most vulnerable are kept in light before making the decision in the resource allocation process. Participation, transparency and accountability is a part of development process that can be achieved through Good Governance. The power of Good governance is that it can bring equity, poverty and quality of life. In a nutshell, the processes and structures that guide political and socio-economic relationships, with particular reference to commitment to democratic values, norms and practices, trusted services and just and honest business can be defined as good governance (W' O Okot-Uma and Caffrey, 2000: 1).

It has been pointed out by Matin (2003) that the digital governance is the effective use of Information and Communication Technology (ICT) to improve the system of governance that is in place, and thus provide better services to the Citizens. Great Governance lays on the pillars of information and acknowledgment of this set of information by the decision-makers. Digitization of this entire set of knowledge within a network which links every individual including the decision-makers and gives democratic freedom to everyone to access and make use of this knowledge paves the way for e-Governance. The widening use of ICT is leading to distributed Knowledge and Power structures. It is changing the political scenes as it is reshaping democracy and the way citizens interact with the Government. With the emergence of pro-active Knowledge Societies, Governments will have no choice

but to constantly improvise to bring in greater efficiency, accountability and transparency in their functioning. e-Governance is part of the Government's policy for social inclusion, part of its strategy is to enhance information technology and to help enhance peoples' lives, and this is carried out through the use of: (a) Web publishing, (b) Intranet Development, (c) Promoting citizen access, (d) Email and so on and so forth.

Nath (2003) is of the view that digital governance is a popular term to focus on the new, evolving forms of governance through electronic governance. Good governance lays on the pillars of data and information and its acknowledgment by the decision makers. Digitization of this entire set of knowledge within a network which links every individual including the decision-makers and gives democratic freedom to everyone to access and make use of this knowledge paves the way for digital governance. There are various models of Digital Governance that keeps on expanding and evolving as new applications of ICTs that come to light and it deal with new issues in the area of governance. It can be said that the Moore's law has regulated the Digital revolution and Metcalfe's law has regulated the information revolution (Matin, 2020),(O'Hara & Stevens, 2006). Because both are continuously changing in an unprecedented manner. Therefore, there are no rigid or finite framework of Digital Governance. The GOI has adopted its own model to achieve the targeted goal to reach to the unreached areas and bring development in various sectors of administration of Government through adopting the model of Government to Citizens (G2C), Government to Businesses (G2B), Government to Government (G2G) and Government to Employees (G2E). These Digital Governance models may be examined in light of emergence of knowledge societies and knowledge networkers; role of information in governance process, and Link between ICT and governance. All these models share in common, the inherent characteristics of the new technologies which are enabling equal access to information to anyone who is linked to the digital network and de-centralization of data over the entire digital network. In other words, Information does not reside at any one particular level (or node) in Digital Governance Models. On the contrary, it gets distributed across all the nodes: a fundamental change from the

current 'hierarchal' information flow structures in India. It leads to unequal distribution of information. That results into a greater possibility of its exploitative use at all levels in the country. This distribution of information may happen through direct access to an ICT node, public access or through the use of convergent modes (Bagga & Gupta, 2009).

Section II

2. Digital Governance Models: Government to Citizen services with specific reference to Common Service Centre

The Government initiated the CSC 2.0 Scheme in August 2015 to improve accessibility to technology and digital services for citizens in rural and remote areas of the country (GoI, 2015). This is an example of Government to Citizen Model of digital governance. CSC 2.0 Scheme proposes expansion of self-sustaining CSC network up to the Gram Panchayats by setting up more than 2.5 lakh CSCs within next four years. At least one CSC is proposed in every Gram Panchayat. This would incorporate reinforcing and coordinating more than 100,000 CSCs effectively operational under the existing CSC Scheme and making an extra 1.5 lakh CSCs operational up to the Gram Panchayat level. CSC 2.0 Scheme would prompt consolidation of service delivery through a universal technological platform at all the CSCs the country over, in this way making the e-services, especially G2C services, available anyplace the nation over. The CSC scheme has a 3-tier implementation framework as follows. (1) At the first (CSC) level would be the nearby Village Level Entrepreneur (VLE-freely undifferentiated from a franchisee), to support the provincial purchaser in a group of 5-6 towns. (2) At the second/centre level would be an element named the Service Centre Agency (SCA – freely closely resembling a franchiser) to work, oversee and manufacture the VLE system and business. A SCA would be distinguished for at least one locale (one area would cover 100-200 CSCs). (3) At the third level would be the office assigned by the State-the State Designated Agency (SDA) - to encourage usage of the Scheme inside the State and to give imperative strategy, substance and other help to the SCAs (GOI(DIT), May 2017). See, Figure 1, CSC Eco System.

Figure 1: CSC Eco System.

Source : (CSC, 2015)

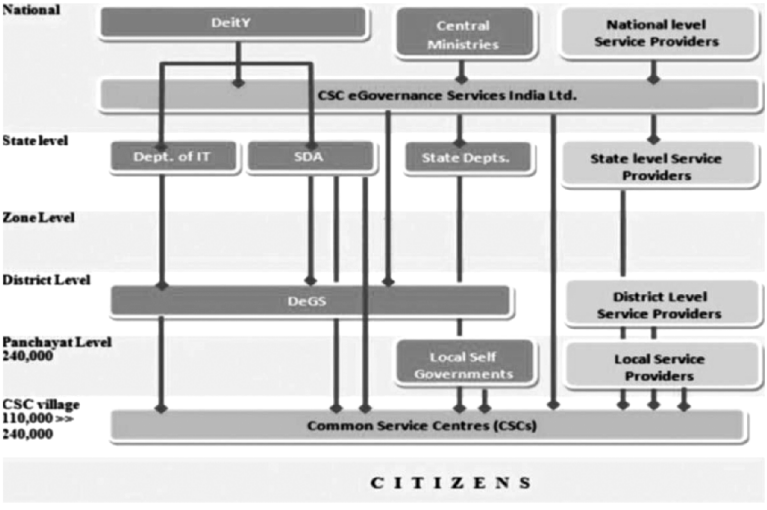

2.1. Design for Empirical Data

The present paper through its primary data develops an idea for discussion and debate that whether the digital governance implementation at the ground level through government to Citizen Model with specific reference to CSC is reaching to the unreached or further it is strengthening the concept of digital divide. The authors have taken the primary data from the first author's Post-Doctoral Report, submitted in July 2019. The approach to study the Government to Citizen Services followed the inductive logic of inquiry. The data were collected through non-probability sampling method. The respondents were chosen on the basis of judgmental sampling. For case studies respondents as the stakeholders of the Common Service Center located in the village were selected. The paper include case study number one and two from the village Thakurganj. The case study number three is from the village Phulganj. The table is generated by following the non-probability sampling method from one hundred respondents from each household See, Table 1, from the village Phulganj. The data was collected from the two villages. The pseudo name of the village is Phulganj from eastern U.P. and the name of the other village is Thakurganj from western U.P. The Village Thakurganj is located at

27° 54' N latitude and 78° 5' E longitudes in the Jawan Sikanderpur Block of Aligarh Disrict. The demographic composition of the village isdivided into the different caste and religions (Uttar Pradesh, C. 2011a). For the present paper two case studies were taken from the village. The name of the other village is Phulganj. It is situated in Lat 25°23 N. and Long 82°34 E in Bhadohi Distict located at the distance about thirty miles from west of Varanasi.The town of Bhadohi, which gives its name to the Pargana and the Tahsil, twelve miles north-east of Gopiganj and about three miles south of the river Varuna. It is connected with Jaunpur by a provincial highway and with Gopiganj by a metaled road running via Gyanpur connecting the road from Bhadohi to Suriawan and Parsipur (Uttar Pradesh, C. 2011b).

CASE STUDY 1

Satpal Chauhan is of twenty six year of age. He is a civil engineer. His brother is also a civil engineer. His father has expired at the age of sixty eight. Satpal is from the higher caste. Both the brother's source of income is the investment in the business of real estate. Both are educated. One of them have done B. Tech. Because of being educated they are aware about the GoI's dream project of digital India. His sisters are also educated. They have got their PAN Card from the Common Service Centre located in his village. He is of the view that CSC has made their work easier otherwise for the purpose they had to look for someone to get their work of Making Pan Card. They had not confronted any inconvenience while making the Pan card. They were happy and optimistic towards the online transactions and towards the CSC located in the village. He observed that CSC has made their villagers especially downtrodden sections of the society better by accessing resources to desired documents which used to be costly and beyond one's reach. For documents like caste, income, domicile, etc. Although he encountered little difficulties in getting documents from CSC but in its absence it could have been even more difficult. He further observed that various digital applications like Paytm have made life of ordinary villagers better and easier in using various resources and its access is feasible by the people which would have been otherwise impossible to access. He and his family members

required PAN Card for the purpose of opening their bank accounts. All were successful in getting their PAN Cards.

CASE STUDY 2

Ajay Kumar, a humble, thorough gentleman and a simple person, enquired about first author's visit to the village and later on he highlighted on the CSC and its usefulness that how it is providing benefits to the villagers. He shared that CSC is providing an opportunity to the villagers that without going to tehsil they can get their caste, income, domicile certificates of the villagers. This is incredible technology. Anyone from the village whether irrespective of their age, gender, caste, class: girl, boy, old and young, high or low castes, rich or poor stakeholders can visit to these centres without any problem because of being its location in the village. They can apply for their required documents like, caste, income, domicile certificates from the centres and eventually get these certificates after due processing. It enable many in applying for online scholarship scheme. He further observed that he wanted to make Kisan Credit card. But for getting the Kisan Credit card, he required various documents including a document related to the land ownership. In an absence of the credit card, various subsidies on seeds, fertilizer was denied to him. However, some efforts, he was able to get his Kisan Credit card. The point that he want to highlight was that at times, there are some difficulties in availing various services from the CSCs. But eventually one can overcome by frequent visits to the CSCs, which could not have been possible in its absence as visiting Block headquarters or District headquarters would have cost their fortunes, time and contacts with the officials. However, because of its location of the CSCs in the village, even poorest of the poor can avail its services after encountering some difficulties. He has narrated that document procurement by the poor, illiterate villagers are not an easy task. For instance, if a farmer is illiterate or if he is a poor then for him getting a Kisan Credit card is a biggest challenge. Because without the Kisan Credit card it will not be possible for him to avail the freebies provided by the government for the villagers like getting free seed, fertilizers, etc. He further observed that he faced difficulties in getting his father's PAN card. His father is eighty two

year old. It became mandatory to link PAN card with the bank account for operating his bank account. But he was now too old to get his PAN card because according to him his father has crossed the age limit of getting the PAN card. He was worried because his father has Fixed Deposit in his name and without a PAN card it is a problem to encash and withdraw the amount.

CASE STUDY 3

Mohit Yadav is a young villager who belong to the caste of Yadav. He comes from an illiterate family. He was the youngest son of their parent. The other two brothers are elder to him and they were educated. Each brother have their own tiny business. Mohit has told that he was about to finish his diploma in polytechnic. Thus he also needs some kind of work that can generate income. But he was not interested in doing any kind of job in any company. Thus he thought to open a tiny shop of café, where he could set up his computer, printer and used modem to provide the facility of internet services to his customers. Thus he first started the shop as a café. Later on, he came to know about the project of CSC. Then he had done the registration for CSC to become the Village Level Entrepreneur. Further he had told that the umbrella portal of CSC to provide different kind of services like online Application For Scholarship (Gen & SC/ST), Online Application For Marriage & Illness Grant, Online Application For Assistance Against Atrocities, Online Women Welfare & Child Development, Online Pension For Widows, Online Dampati Puraskar Scheme To Promote Widow Marriage Under 35 Years, Online Financial Assistance To Women Of Dowry Scheme, Online Legal Assistance To Dowry Sufferers Women Scheme, Online Grant For Marriage Of Daughter Of Widow Destitute Scheme, Online Handicap Welfare Online Handicap Pension, Online Application For Loan To Handicap Person, Online Application For Aids & Appliances, Online Application For Marriage Grants, Online Panchayati Raj, Copy of Kutumb Register etc. CSC is an effective gateway to provide all services on one portal. But he also shares that every initiative have some pros and cons. He has also pointed out that the server of the online form filling of the main department web page is easier to

process the form rather than the form filling through JSK. But he was happy to do the job of VLE. He told that his CSC had progressed so much that he had now appointed additional four man to work in his center because of the increased work load. He said that villagers visited to his center for applying to the online form of Ridh Mochan, by which the government will look into the matter to waive off their loan. For getting the benefit of the services they had to attach the scan copy of the certain documents as per the requirement thus they need to attach a Bank pass book, Aadhar, photographs and the Kisan Credit Card. Thus the problem occurs for the villagers if there is any kind of mistakes in their documents then they will not be able to avail such kind of the services. He shared that the villagers had the problem of spelling in their Aadhar card or either their bank passbook for which they had to come across the difficulties to apply online to avail any kind of the services. Further the VLE on his own experience of his customer he shared a ground level fact that when the villager will apply online for the ration from the CSC then it will not be appreciated by the Kotedar of the village and the Kotedar will not be ready to accept that slip for giving ration to the villagers. The paradoxical situation is here that the villagers had applied for the online ration card, however the ration card was not generated. But they have the online generated slip of proof which assured that they have applied for the online ration card. On the basis of which Kotedar distribute the ration to that person. But the expectation of the Kotedar was that the online application for ration should be applied through him. Subsequently, he would update to the stakeholder for his/her eligibility or non-eligibility for the ration. In the meanwhile there was an old man sitting on the Common Service Centre. He was the representative of the Pradhan, who had a list of all senior citizens of the village, in need to apply for the online old age pension scheme of the state government. Thus the representative of the Pradhan was there to do the online registration from the Common Service Center. This was the great initiative and endeavour by the Pradhan which ought to be valued and it ought to be followed by other Pradhans as well.

Table 1 : Education Wise Services Availed from CSC (In Phulganj village)

Services Availed	Education Wise					Total
	Illiterate	Primary	Secondary	Senior Secondary	Post Senior Secondary	
Adhar Card	11.72%	3.13%	3.13%	0.78%	1.56%	20.31%
Bunkar Card	0.00%	0.78%	0.00%	0.00%	0.00%	0.78%
Caste Certificate	3.91%	3.91%	**5.47%**	1.56%	2.34%	17.19%
DD Online	0.00%	0.78%	0.00%	0.00%	0.00%	0.78%
Domicile Certificate	2.34%	1.56%	3.13%	0.78%	1.56%	9.38%
Igrs	0.78%	0.00%	0.00%	0.00%	0.00%	0.78%
Income Certificate	2.34%	2.34%	**4.69%**	0.78%	0.78%	10.94%
Khasra/Khatauni	0.00%	0.00%	0.00%	0.00%	0.78%	0.78%
Online Exam form	0.00%	0.78%	2.34%	0.00%	1.56%	4.69%
Online Pension	0.00%	0.78%	0.00%	0.00%	0.00%	0.78%
Online Railway Ticket	0.00%	0.00%	0.00%	0.00%	0.78%	0.78%
Online Ration	0.00%	1.56%	4.69%	0.00%	0.00%	6.25%
Online Scholarship	2.34%	5.47%	4.69%	0.78%	6.25%	19.53%
Online Work Related To Education	0.00%	1.56%	0.00%	0.00%	0.00%	1.56%
PAN Card	0.78%	1.56%	0.78%	0.00%	0.00%	3.13%
Work Related With Photocopy/Print Out	0.00%	0.00%	**1.56%**	0.00%	0.78%	2.34%
Grand Total	**24.22%**	**24.22%**	**30.47%**	**4.69%**	**16.41%**	**100.00%**

(Source: Karimi, A. 2019, p. 109)

Table-1 shows that the respondents those who were illiterate in total have availed 24.22% of the different kinds of services. 24.22% of the respondents are those who had primary education. They have availed different kind of

services. 30.47% of the respondents from secondary education in total have availed the services. 4.69% of the respondents from senior secondary education in total have availed different kind of the services. 16.41% of the respondents frompost senior secondary education in total have availed different kind of services. Thus we can see from the table that there are 20.31 percent of the respondents those who have availed the services of generating the Adhaar from the CSC of different qualification. Thus we can see from the above table that there are 11.72 percent of the respondents who have availed the services of getting Adhaar from the CSC. Likewise 17.91 percent of the respondents have availed the services of generating the caste certificate. Among that we can see there are 3.91 percent of the respondents from the illiterate and primary education. There are 10.94 percent of the respondents those who have availed the services of Income certificate. 4.69 percent of the respondents from the secondary Education. Thus the initiative of Common Service Center in the Village has made their work easier. From the table it can be seen how CSC is including the vulnerable section of the society.

Postscript

It may be concluded that the project of Common service center is an appreciative attempt by the Government of India. It was because of the CSC that the various Government to Citizen Services are reaching to them on time in a positive way with certain lacunas. At a time the initiative played an important role for the rural illiterate people by helping them in online availing the document of caste certificate, domicile certificate, income certificate etc. For which they do not need to visit tehsil. They have got the facility of the various departments at single window of Common Service Center. Villagers can avail the services by applying from the Common Service Center which is evident from the Table no. 1. Case study number one shows that the education and economy plays an important role towards the use and need of digitized apps like paytm. The conclusion drawn that they are educated that is why they understand the importance of digitization and they are enjoying it not only by utilizing the services from Jan Seva Kendra but also by using app like Paytm. The second case study reflects

the problem of digital governance by highlighting the point that how a person is vulnerable in availing the services in an absence of the proper supporting documents.

The last case study reflects that not only Common Service center has helped the villagers in benefitting the various basic documents but it has also helped the local in getting the employment opportunity. In addition to the VLE has employed four persons in his shop. The case study depicts that how the Pradhan by one of his trustworthy asked for his illiterate villagers initiated registration of the rural old villagers to do the online registration for availing the services of pension.

It can be said that Information and Communication technology is very helpful for an effective governance irrespective of many limitations observed at the grass root level it can be analyzed that Information and Communication technology is an effective model to provide Government to Citizen Services and Citizen to Government Services. Thus the Project CSC a model of governance for the inclusion of the downtrodden and marginalized sections of the society. The role CSC is playing in the digital governance can be looked upon from the theoretical understanding of the thinkers like Giddens (2000) and Castells (1996) that have well interpreted the contemporary society in their work. The analysis we can draw that the network of Information and Communication Technology has provided an opportunity in the rural areas by including them and bringing people and places together that they are able to develop toward the space less space which means that physical movement for the document from one place to another place was restrained because of the concept of the 'time/space compression' (Harvey, 1989). Manuel Castells (1996) has pointed out through 'network society', the dominant functions processes in contemporary society around the networks rather than physical boundaries - what Castells termed the 'space of flows' (i.e. the flow of information) rather than the space of places (i.e. its location). Now ICTs can be said to be firmly at the heart of the interconnected logic that can be said to characterize twenty-first century life. In the context of Amartya Sen (2006) "ICT is playing a role in a community as a tools for extending the power of the individuals' human mind and cultural endeavours" (Steyn, J., & Johanson, G., 2011). The most important thing to be consider that there is also the possibility of digital gap because of the unawareness and low education background of the villagers. Which

needs to be taken under consideration for the successful implementation of the CSC at the grass root level.

Acknowledgements

The first author would like to acknowledge her sincere thanks to the Indian Council of Social Science Research for granting Post-Doctoral Fellowship, which enabled the study on Digital Inclusion. This paper has heavily drawn primary data from the study mentioned above. Without ICSSR grant, it could not have been possible to carry out the field work and to draw any subsequent meaningful output having implications for the policy makers. The second author was the supervisor of the first author. Both together worked out the research plan and its execution. This paper was also presented in a conference and participants feedback have been taken into consideration while rewriting the paper.

References :

- Bagga, R. K., & Gupta, P. (2009). Transforming Government E-Governance Initiatives in India. Retrieved from *http://www.csi-sigegov.org/transforming.pdf 6/6/17*.
- Castells, M. (1996). *The Information Age: Economy, Society, and Culture* (*Volume I: The Rise of the Network Society)*. Oxford: Blackwell.
- Giddens, A. (2000). *Runaway World: How Globalization is Shaping our Lives*. London: Routledge.
- GoI. (2015). *E-Governance Policy Initiatives Under Digital India.*Retrieved from https://digitalindia.gov.in/writereaddata/files/3.CEO%20NEGD%20Digital%20India_12022018_5.pdf on 31/6/18
- CSC. (2015, July 1). Redefining Governance in India through CSC. New Delhi, India.GoI,(DIT). (May 2017). Guidelines for implementation of the common services centers.
- Govt of Uttar Pradesh. (2011a). *District Census Handbook Aligarh Village and Town Directory.* Lucknow: Directorate of Census Operations.
- Govt of Uttar Pradesh. (2011b). *District Census Handbook Sant Ravi Das Nagar Bhadohi: Village and Town Directory.* Lucknow: Directorate of Census Operation.
- Harvey, D. (1989). The Condition of Post Modernity: An Enquiry into the Origins of Cultural Change. Oxford: Blackwell

- Karimi, A. (2019). In pursuit of Digital Inclusion in India. New Delhi: Indian Council of Social Science Research.
- Matin, Abdul. (2020). 'Informationalism' in Ritzer, George and Chris Rojek (Editors in Chief) The Wiley Blackwell Encyclopedia of Sociology, 2nd Edition. (Gillian Kane: Project Manager). London: Wiley.
- Matin, Abdul. (2003).'e-Governance in India: Genesis and Prognosis', in AftabAlam (ed). Crisis of Governance. Delhi: Raj Publications, pp. 176-197.
- Matin, Abdul and P.K. Mathur. (2003). 'Governing A Stratified Society: Development, Conflict and Change', in Aftab Alam, Crisis of Governance, Delhi: Raj Publications, pp. 108-123.Nath, Vikas. (2003). 'Digital Governance Models: Moving towards good governance in developing countries', *The Innovation Journal: The Public Sector Innovation Journal*, Volume 8, No.1.
- O'Hara, K., & Stevens, D. (2006). *Inequality.com power,poverty and the digital divide.* England: Oneworld Publications.
- Sen, A. (2006). *Identity and Violence: the Illusion of Destiny*. New York: W.W. Norton.
- Steyn, J., & Johanson, G. (2011). *ICTs and Sustainable Solutions for the Digital Divide: Theory and Perspectives.* Harshey: InformatIon scIence reference.
- W'O Okot-Uma, Rogers and Larry Caffrey. (eds.). (2000). *Trusted Services and Public Key Infrastructure*. London: Commonwealth Secretariat. , London.

Dr. Asfiya Karimi
Guest Faculty, CPECAMI (Bridge Course)
Aligarh Muslim University, Aligarh-202002(U.P.)
Email: asfiyainindia@gmail.com

Prof. Abdul Matin (Retd.)
Visiting Professor
Department of Sociology
University of Science and Technology Meghalaya
Email: amatinamu@gmail.com

तीर्थ राज पुष्कर : ऐतिहासिक व सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में

● डॉ. कंचन शर्मा

प्रस्तावना

राजस्थान अपनी जटिल भू-जैविकीय संरचना के लिए जाना जाता है। इस संपूर्ण प्रदेश को अरावली पर्वत माला दो भिन्न प्रकारों के भूखण्डों में विभक्त करती है। इस पर्वत माला के पूर्व का भाग हरा-भरा क्षेत्र है तो पश्चिमी भाग बलुई स्तूपों से युक्त है। किसी युग में यहाँ आज जैसा रेगिस्तान नहीं था अपितु लवण सागर नामक खारा समुद्र था। वाल्मीकि रामायण में इस क्षेत्र के सम्बन्ध में एक उल्लेख मिलता है : 'सीताजी का रावण द्वारा हरण कर लिये जाने पर जब भगवान श्रीराम लंका जाने के लिए, वानरों सहित समुद्र के किनारे पहुंचे तो उन्होंने लंका पर चढ़ाई करने हेतु समुद्र से रास्ता मांगा तो, समुद्र ने श्रीराम का अनुरोध नहीं सुना, ऐसी स्थिति में समुद्र का जल सोखने के लिए 'आग्नेयास्त्र' का संधान किया, जिससे समुद्र भयभीत हो गया तथा उसने भगवान श्रीराम को समुद्र पार करने का उपाय बताने का वचन दिया। समुद्र ने भगवान से प्रार्थना की कि अपने इस अमोघ आग्नेयास्त्र का प्रयोग द्रुमकल्प (लवण सागर) के उत्तरी भाग पर करें। जहाँ दुष्ट आभीर आदि समुद्र का जल अपवित्र करते हैं। भगवान ने वैसे ही किया। गगनभेदी गंभीर गर्जन के साथ समुद्र का पानी सूख गया और उस स्थल पर जहाँ आग्नेयास्त्र गिरा एक विशाल छिद्र हो गया। जिसमें से विमल जल का स्रोत फूटा। यह स्रोत तीर्थराज पुष्कर में है। राजस्थान की भूमि और तीर्थराज की उत्पत्ति एक साथ स्वीकार की गयी है। राजस्थान रेगिस्तान हो गया है। चारों ओर मरुकान्तर का विस्तार हो गया। श्रीराम जी की कृपा से सब आनन्द मंगल और कुशल हो गये। यह स्थान वनस्पति जगत और पशु सम्पदा से भरपूर हो गया। रास्ते निरापद हो गये। यह स्थान रेल व सड़क मार्ग से जुड़ गया। पर्यटन का आकर्षक केन्द्र बन गया।

आस्ट्रेलिया, चीन, अरब, अफ्रीका, अमेरिका आदि की तुलना में जल, वनस्पति, पशु, मानव संस्कृति तथा प्राकृतिक सौन्दर्य से युक्त है।

तीर्थराज पुष्कर

अजमेर नगर से लगभग 13 किमी. की दूरी पर अरावली पर्वत श्रृंखला की नाग पहाड़ी की तलहटी में स्थित तीर्थराज पुष्कर हिन्दुओं का सबसे बड़ा तीर्थ स्थल है। यह तीर्थराज प्रयाग का गुरु कहा जाता है। वाल्मीकि रामायण, महाभारत, पद्मपुराण, हरिवंश पुराण, स्कन्ध पुराण, कूर्म पुराण, नृसिंह पुराण, वायु पुराण, श्रीमद् भागवत पुराण, व्यास स्मृति, शंख स्मृति, रूदायमल, व्रतराज, दान चन्द्रिका, पंच रत्न यहाँ तक कि वेदों में भी इस प्राचीन तीर्थ का वर्णन मिलता है। विभिन्न पुराणों में पुष्कर के 108 नाम बताये गये है ''पद्म पुराण के सृष्टि खण्ड में पुष्कर को अन्य सभी तीर्थों से श्रेष्ठ बताया गया है।''[1]

पुष्कराध्यानि सिद्धानि न विघ्नतंत्र कारणम्।
पर्वतानां यथा मेरूः पक्षिणां गुरूड़ो यथा।
तदत्रसमस्त तीर्थनां माद्यं पुष्कर मिष्यते।(8)
अनादि मेत द्वि प्रेन्दा पुष्करं तीर्थ मुक्तम्
पुरा पृष्टेन देवानामिदं मुक्त स्वयं भुवा।(9)

अर्थात् पर्वतों में जिस प्रकार मेरू, पक्षियों में गरूड़ श्रेष्ठ है, उसी प्रकार तीर्थों में पुष्कर सर्वश्रेष्ठ है। यजुर्वेद में पुष्कर का उल्लेख इस प्रकार हुआ है :—

पुरीष्योसि व्विश्रवम्ब्भराऽअर्व्वात्वात्प्रथमो निरमन्नय दग्ने। (1)
त्वामग्ने पुष्करादद्धयथर्व्वा निरमन्नथत।
मूर्द्धनो व्विक्षवस्य व्वाधत्। (2)[2]

महाभारत के वन पर्व :

नृ लोके देव देवस्य तीर्थ त्रलोकयाविश्रुंत।
पुष्कर नाम विख्यात महाभाग समा विशेत।
दश कोटि सहस्त्राणि तीर्थनां पे महामन्ते।
सानिध्यमं पुष्करे पेषा निसंध्या कुरू नन्दन।

अर्थात् मानव लोक में देवी-देवताओं का पुष्कर तीर्थ तीनों लोकों में विख्यात है। जिनका तीनों संध्या में पुष्कर में सान्निध्य होता है, उसे दश कोटि सहस्त्र तीर्थों का माहात्मय प्राप्त होता है। तीर्थराज पुष्कर इस धरा पर वह पावन

स्थली है जिसके अंचल में ऋषियों, मुनियों और तपस्वियों ने युगों तक चिन्तन, मनन और तपस्या की है। कहते हैं, मर्यादा पुरुषोतम श्रीराम ने पुष्कर की पावन झील में अपने स्वर्गवासी पिता राजा दशरथ का पिन्ड तर्पण किया। अज्ञातवास की अवधि में पाण्डवों ने सुरम्य नाग पर्वतमाला में कुछ समय व्यतीत किया। अगस्त्य, भर्तृहरि, कण्व, विश्वामित्र आदि ऋषियों की भी यह तपोभूमि रही। वाल्मीकि रामायण के 61वें सर्ग में दक्षिण दिशा में तप के दौरान असूरों द्वारा विघ्न डाले जाने से त्रस्त होकर ऋषि विश्वामित्र द्वारा पश्चिम दिशा में आकर तप करने का उल्लेख मिलता है, ऋषि विश्वामित्र कहते हैं :—

पश्चिमायां विशालायं पुष्करेषु महात्मनः।
सुखं तपश्चरिश्यामों वरं तद्धि तपोवनम्।।3।।
एवमुक्तवा महातेजा पुष्करेषु महा मुनिः।
तप उग्र दुराधर्ष तेपे मूल फला शनः।।4।।

विशाल पश्चिम दिशा में जहाँ पुष्कर आनन्द तीर्थ है और उसके निकट बहुत अच्छे तपोवन है, वहीं जाकर मैं शान्तिपूर्वक तप करूंगा। अग्नि पुराण पुष्कर की यात्रा दुष्प्राप्य बताता है—

पुष्करम् दुष्करम् तीर्थम् पुष्करम् तपः।
पुष्करम् दुष्करम् दानम् गन्तुचेव सुदुष्करम्।।[3]

अर्थात् पुष्कर एक दुष्कर तीर्थ है। पुष्कर में तप करना दुर्लभ है। पुष्कर में दान करना और वहाँ की यात्रा भी दुर्लभ है। पद्म पुराण में लिखा है कि पुष्कर में प्रातःकाल मध्याह्न और सायंकाल तीनों सन्ध्याओं में दस हजार करोड़ तीर्थ उपस्थित रहते हैं, जो मन से भी पुष्कर तीर्थ के सेवन की इच्छा रखते हैं, उस मनस्वी के सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। बद्रीनाथ, द्वारका, पुरी और रामेश्वरम् (चार धाम) की यात्रा का पुण्य फल तब तक नहीं मिलता, जब तक पुष्कर के सरोवर में स्नान नहीं कर लिया जाता।

पौराणिक व ऐतिहासिक प्रसंग

जगतपिता ब्रह्मा ने देवताओं और ऋषियों की उपस्थिति में कार्तिक शुक्ला एकादशी से पूर्णमासी तक सृष्टि रचना हेतु पुष्कर में महान यज्ञ सम्पन्न किया। पद्म पुराण के अनुसार कथा इस प्रकार है ब्रह्माजी ने इस यज्ञ हेतु उपर्युक्त स्थल के चयनार्थ कमल पुष्प फेंका, जो पुष्कर में गिरा और तीन स्थानों पर टकराया, जहाँ से जल प्रस्फुटित हुआ वे तीनों स्थान आज भी ज्येष्ठ पुष्कर, मध्य पुष्कर,

और कनिष्ठ पुष्कर कहलाते हैं। मुख्य पुष्कर (ज्येष्ठ पुष्कर) से दो मील की परिधि में ही शेष दोनों पुष्कर हैं। शास्त्रोक्त विधि से यज्ञ के लिए ब्रह्माजी ने पत्नी सावित्री को बुलावा भेजा जो नारदजी के कथन का गलत अर्थ लगाने से समय पर नहीं पहुँच पाई। तब ब्रह्माजी के आदेश पर इन्द्र ने एक ग्वाल कन्या को गाय के मुंह से पवित्र करके, उसे गायत्री नाम देकर ब्रह्माजी की पत्नी के रूप में यज्ञ में बैठा दिया। सावित्री ने अपने स्थान पर गायत्री को देखा तो ब्रह्माजी सहित सभी को शाप देकर स्वयं रूष्ट होकर निकटवर्ती पहाड़ी पर जा बैठी। उक्त महान यज्ञ की स्मृति में अनन्तकाल से पुष्कर में कार्तिक शुक्ला एकादशी से पूर्णमासी तक विशाल धार्मिक मेला और पशु मेला लगता है।

पुष्कर में 52 घाट बने हैं, सरोवर के चारों तरफ। मान्यतानुसार नाग कुण्ड समृद्धि का, रूप तीर्थ सुन्दरता का, कपिलवापी कुण्ड कुष्ठ निवारण का तथा मार्कण्डेय मुनि कुण्ड ज्ञान का प्रतीक है।

- पुष्कर में ईसा से पांचवी-छठी शताब्दी पूर्व के सिक्के व अवशेष भी मिले हैं। भोपाल के पास सांची के स्तूप में ईसा से पूर्व दूसरी सदी के शिलालेखों से पता चलता है कि बौद्ध भिक्षु अर्हदीन, नागरक्षित, आर्य बुद्ध रक्षित, हिमगिरी पुष्पक और इसीदता ने पुष्कर से आकर बौद्ध तीर्थ सांची में दान किया।
- नासिक के पास भिरश्चिम पहाड़ियों की गुफा में मिले 125 ई. के शिलालेख के अनुसार शक राजा दिनिका के पुत्र उषावदात ने पुष्कर तीर्थ की यात्रा की और वहाँ 3000 गायें व एक गांव दान में दिया।
- प्रतिहार राजा नागभट्ट ने इसका जीर्णोद्धार कराया। सरोवर की खुदाई कर किनारे पर घाट बनवायें।
- पुष्कर की सुरक्षा हेतु 1105 ई. में पृथ्वीराज प्रथम जो सांभर पर राज्य करता था उसने 700 चालुक्यों को मारकर पुष्कर व पुष्कर के ब्राह्मणों की सुरक्षा की।
- काश्मीर के कवि जयानक ने पुष्कर में रहकर पृथ्वीराज विजय लिखा, जिसमें पुष्कर तीर्थ व ब्रह्मा मन्दिर की महिमा लिखी गयी है।
- महाराज अर्णोराज ने भी पुष्कर की मरम्मत करवाई व वराह मन्दिर बनवाया।
- जैनियों ने इसे पद्मावती नगरी कहा है।
- 1809 में मराठा सरदारों ने इसका पुनर्निमाण करवाया।
- 1762 में गुरुगोविन्द सिंहजी ने गुरुग्रन्थ साहिब का पाठ किया था।
- 1911 में महारानी मैरी ने यहाँ महिलाओं के लिए पृथक घाट का निर्माण कराया।

- महात्मा गांधी की अस्थियाँ यहाँ प्रवाहित की गई थी इसलिए महिला घाट को गांधी घाट भी कहते है।

पुष्कर के विश्वविख्यात मन्दिर

पुष्कर में 400 के करीब मन्दिर है, जिसमें अग्रांकिंत मन्दिर विश्व में धरोहर के रूप में स्थित है।

ब्रह्माजी का मन्दिर

ब्रह्मा मन्दिर के निर्माण की वास्तविक तिथि तथा निर्माता अज्ञात है। किन्तु इसका वर्तमान स्वरूप बाद में ई. 1809 में सिंधिया के मंत्री गोकुलचन्द पारीख द्वारा एक लाख तीस हजार रुपये की लागत से पुन निर्माण के बाद का है। इससे पूर्व 1719 ई. में आमेर के पुरोहित गिरधरदास की पुत्री बूंदीबाई द्वारा कराया गया।[4] मन्दिर विशाल गुम्बदाकार हैं। ब्रह्मा की चतुर्मुख प्रतिमा सुशोभित है। संगमरमर से निर्मित कमल पुष्प में पद्मासन युक्त चतुर्मुख ब्रह्मा अपने हाथों में कमल, कमंडल, वेद एवं माला लिये मानो जगत को चारों पुरुषार्थ का संदेश दे रहे हैं। ब्रह्माजी के मानस पुत्र सनक, सनन्दन, सनातन तथा सनत कुमार की बाल प्रतिमायें मन्दिर के मुख्य मंडप में लगी हैं।

''ब्रह्मा मन्दिर को औरंगजेब ने तोड़ने का फैसला किया परन्तु जैसे ही उसने पुष्कर सरोवर में मुंह धोया तो उसके बाल सफेद हो गये और चेहरे पर झुर्रियां पड़ गयी तब उसने इस विचार का त्याग किया। कर्नल टॉड 'ब्रह्मा मन्दिर' में 'क्रॉस' का निशान देखकर आश्चर्य चकित हो गये।''[5]

वराह मन्दिर

इस मन्दिर का निर्माण 12वीं सदी में राजा अर्णोराज ने करवाया था। इसें मुगल आक्रमणकारियों ने तोड़ डाला, उसके बाद राणा प्रताप के भाई सगर ने इसका पुननिर्माण करवाया जिसे ओरंगजेब ने तोड़ डाला, फिर जयपुर नरेश सवाई जयसिंह ने इसका पुननिर्माण करवाया जो आज मौजूद है।[6] 1727 ई. में यहाँ 'वराह अवतार' की मूर्ति स्थापित की गई। मन्दिर में स्थापित विग्रह को जलझूलनी एकादशी पर पुष्कर में स्नान करवाया जाता है और शोभा यात्रा निकाली जाती है।

रमा वैकुण्ठ मन्दिर

यह मन्दिर रामानुजाचार्य के अनुयायी वैष्णव सम्प्रदाय द्वारा निर्मित है। इसमें पद्ममूर्ति की प्रतिमा है। सामने गरुड़ देवता विद्यमान है। 361 देवी-देवताओं की मूर्तियाँ भी इस मन्दिर में स्थापित हैं। दक्षिण भारतीय कारीगरों

द्वारा यह मन्दिर निर्मित किया गया था। इसका पुनर्निर्माण सेठ मांगीलाल बांगड़ ने 8 लाख रुपये लगाकर करवाया था।

रंगजी का मन्दिर

यह मन्दिर भी वैष्णव सम्प्रदाय द्वारा निर्मित है। श्रीकृष्ण की लीलाओं को दीवारों पर चित्र शैली में उकेरा गया है। इसके अतिरिक्त सावित्री, बद्रीनाथ मन्दिर, बिहारीजी का मन्दिर तथा अजगंन्ध महादेव मन्दिर प्रसिद्ध है।

महादेव मन्दिर

यह सफेद संगमरमर से निर्मित पंचमुखी महादेव का मन्दिर है जो अपने आप में बहुत ही सुन्दर है। इसका निर्माण ग्वालियर सम्राट अन्नाजी सिंधिया ने करवाया था।

पद्म पुराण के अनुसार

अजगंध च देवेशं देवदेवं पिवाकिनम्।
अष्टांग प्रणिपातेन नत्वा रामस्त्रिलोचनम्।[7]

पुष्कर का सांस्कृतिक महत्त्व

कार्तिक एकादशी से पूर्णिमा तक लगने वाले मेले में लाखों की संख्या में लोग आते हैं। बालू के रेत के टीलों पर तम्बू लगाकर रहते हैं। पांच दिनों में पुष्कर सरोवर में स्नान का बड़ा महत्त्व है। महर्षि विश्वामित्र के गायत्री मंत्र की, आचार्य भरत मुनि के नाट्य शास्त्र और विभिन्न साहित्यों का सृजन यहाँ हुआ है। यहां पर इन पांच दिनों में शास्त्रार्थ एवं धार्मिक गोष्ठियाँ हुआ करती थीं। बारहवीं सदी तक यहाँ यह सांस्कृतिक मेला भरता था। इस मेले का खर्च अजमेर के राजा उठाते थे।[8]

यहाँ ब्राह्मण, पण्डित, शास्त्री, आचार्य, विद्वान एवं जैन आचार्यों का आवागमन रहता था। अनेक शास्त्रार्थ यहाँ हुए हैं। आयुर्वेद की गोष्ठियां भी यहाँ सम्पन्न की जाती थीं। दिल्ली सल्तनत काल में यहां सांस्कृतिक मेला रोक दिया गया। बारहवीं से पन्द्रहवीं सदी तक मात्र कार्तिक स्नान तक सीमित हो गया।

''मुगल सेना में युद्ध हेतु घोड़ों की कमी हो जाने पर, पुष्कर में जहांगीर द्वारा पशु मेले का आयोजन किया गया। 1615 ई. में यहाँ घोड़ों की सबसे ज्यादा बिक्री हुई थी। सत्रहवीं सदी में पुष्कर पशु मेले के रूप में दूर-दूर तक विख्यात हो गया। 1818 ई. में सड़क मार्ग से जोड़ा गया पुष्कर घाटी को

जबकि 1976 में रेलवे लाईन से। ब्रिटिशकाल में यहाँ विदेशी शैलानी आये उस समय से आज तक यहाँ सांस्कृतिक और पशु मेला दोनों होते हैं। मेले के कारण यहाँ का विकास हुआ है। बहुत से विदेशी शैलानी यहाँ रहने लग गये हैं। यहाँ का रेगिस्तान, पहाड़ी और लोक संस्कृति आकर्षण का केन्द्र है।

निष्कर्ष

विशुद्ध धार्मिक स्थल के रूप में जाने जाने वाले पुष्कर ने अनेक परिवर्तनों व आघातों को सहन किया है। पुष्कर तीर्थराज है। स्नान की पवित्रता के साथ-साथ साहित्य, संस्कृति, धर्म ग्रन्थ, पौराणिक प्रसंग और कला के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। पशुमेला यहाँ की सांस्कृतिक धरोहर है। पर्यटन के साथ यह राजस्थान ही नहीं भारत की आन-बान और शान है। समय के साथ कुछ विसंगतियाँ यहाँ पैदा हो गयी हैं। हम सबको मिलकर उन्हें दूर करना है ताकि यह पवित्र नगरी अपने तीर्थराज के पद पर आरूढ़ रह सके।

संदर्भ

1. मोहनलाल गुप्ता, *रंगीला राजस्थान, बीकानेर, जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन,* नवभारत प्रकाशन, महाराजा दिलीपसिंह कॉलोनी, जोधपुर, 2004, पृ. 30
2. मोहनलाल गुप्ता, *अजमेर : जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक* अध्ययन, पृ. 43-44
3. मोहनलाल गुप्ता, पूर्वोक्त, पृ. 45
4. *सुजस,* जगप्रसिद्ध है अजमेर के सागर व सरोवर, अजमेर, 2008, पृ. 418 व 1155
5. *राष्ट्रदूत,* साप्ताहिक, संरक्षणापेक्षी पुष्कर, 24 नवम्बर 2002
6. धनराज दफतरी, *राजस्थानी संस्कृति : संदर्भ और स्वरूप,* सुरभि सरदारशहर, कल्चरल अकादमी जयपुर, प्रथम संस्करण, 2005
7. एस.एल. नागौरी, *राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास,* मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर, 2010
8. राजेन्द्र शंकर भट्ट, *राजस्थान का सांस्कृतिक प्रवाह,* पंचशील प्रकाशन जयपुर, संस्करण 2000

डॉ. कंचन शर्मा

व्याख्याता (सीटीई)

शिक्षा संकाय, उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान, मानित विश्वविद्यालय

गांधी विद्या मन्दिर सरदारशहर, चूरू (राज.)

❑❑❑

झारखण्ड में नक्सल समस्या : गाँधीय समाधान

● डॉ. सतीश कुमार वर्मा

एकीकृत बिहार से जब झारखण्ड अलग हुआ तो लोगों की आशाएँ जगी, लेकिन नक्सलवाद की समस्या राज्य के विकास में एक रोड़ा बनकर उभरी। नक्सली अपनी मूल विचारधारा से अलग होकर हिंसा और लूटपाट कर स्वहित को बढ़ावा दे रहे हैं। सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुँचा रहे हैं। इन समस्यों के समाधान के लिए सरकार द्वारा कई प्रयास किए गये लेकिन कारगर सिद्ध नहीं हुए। प्रस्तुत शोध-आलेख में इस समस्या के समाधान में गाँधीय विकल्प को प्रस्तुत किया गया है जिसमें गाँधी के सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, अस्तेय, न्यास, सर्वोदय, साध्य-साधन की पवित्रता जैसे विचारों के आधार पर नक्सलवाद की समस्या को जड़मूल से समाप्त करने के विकल्प बताए गये हैं।

नक्सलवाद समाजवादी विचारधारा पर आधारित एक ऐसा राजनीतिक, आर्थिक समूह है जो वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था को समाप्त कर सामाजिक न्याय पर आधारित शोषणविहीन समाज की स्थापना करना चाहता है। यह मार्क्स, लेनिन, माओ को अपना आदर्श मानता है।[1]

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नक्सलवाद भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए एक गंभीर चुनौती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस आंदोलन ने भारत की सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था को सबसे अधिक प्रभावित किया है इसका उदय एक ऐसी व्यवस्था के लिए हुआ था, जो सामाजिक-आर्थिक न्याय पर आधारित हो, जिसमें सभी को समान अधिकार मिले लेकिन समय के साथ यह अपने मूल सिद्धांतों से भटक गया। वर्तमान समय में इसका मुख्य उद्देश्य विचारधारा के नाम पर अपने स्वहित को बढ़ावा देना है।

झारखण्ड में नक्सली आंदोलन

नक्सलवादी आंदोलन का उदय मई 1967 ई. को चारु मजुमदार के नेतृत्व में पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले के नक्सलवाड़ी ग्राम में हुआ था।

नक्सलवादी आंदोलन में आंतरिक पार्टी संचालन कमेटी के सदस्य कानु संन्याल, सोरेन बसु, जंगल संथाल, खोखन मजुमदार थे।[2] 1968 में यह संगठन भारत के विभिन्न प्रांतों यथा-तेलंगाना, बिहार, यू.पी. तथा मध्यप्रदेश आदि राज्यों में अपने पाँव जमाए।

एकीकृत बिहार से जब झारखण्ड अलग हुआ तब सभी के मन में यह उम्मीद जगी थी कि यह राज्य शीघ्र ही देश के विकसित राज्यों के बीच अपना स्थान बना लेगा, किंतु प्राकृतिक वैभव के साथ उग्रवाद की समस्या विरासत में मिली जो स्वयं को माओवादी, लेनिनवादी कहते हैं लेकिन न तो इन्होंने माओ और लेनिन के चरित्र को ध्यान में रखा न उनकी विचारधारा को।

15 अक्टूबर 2004 को झारखण्ड राज्य में एम.सी.सी. और पी.डब्ल्यू.जी. दोनों का विलय होने के बाद इस संगठन में मजबूती आई। इन उग्रवादी संगठनों की गतिविधियों में तेजी आई। पुलिस बल पर आक्रमण करना, बच्चों को संगठन में शामिल करना, महिलाओं का यौन शोषण करना तथा चुंगी वसूल करना इनका मुख्य कार्य हो गया।

झारखण्ड में नक्सलवादी अपनी विचारधारा से भटक गए हैं। रमेश सिंह मुंडा की हत्या की जांच के दौरान कुंदन पाहन और उसके साथियों ने एनआईए की जो जानकारी दी है, उससे पता चलता है कि झारखण्ड के नक्सली न केवल विचारधारा से दूर हो गये हैं, बल्कि वे वस्तुतः ''कांट्रैक्ट किलर'' बन गये हैं। बिहार से अलग होने के बाद अस्तित्व में आए झारखंड खनिज संपदा से परिपूर्ण होने के बावजूद आज भी अति पिछड़े राज्यों में गिना जाता है। समाज में जो असमानता है, उसके लिए नक्सलवादी व्यवस्था को जिम्मेदार मानते हैं। वे वैचारिक लड़ाई लड़ने की बात करते हैं, लेकिन विचारधारा से अब उनका कोई लेना-देना नहीं रह गया है। दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र में, जहां संविधान में सबको समान अधिकार दिये हैं, आज भी बड़ी विषमता है। देश की बड़ी आबादी रोटी, कपड़ा, मकान, सड़क, स्वास्थ्य और रोजगार जैसी बुनियादी सुविधाओं के लिए जद्दोजहद कर रही हैं। इस विषमता को दूर करने के लिए समाज का एक तबका बागी हो गया। ऐसे ही बागी लोगों में शामिल थे भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के चारु मजुमदार और कानू संन्याल। इनका मानना था कि मजदूरों और किसानों की दुर्दशा के लिए सरकारी नीतियां और पूरी लोकतांत्रिक व्यवस्था जिम्मेदार है।[3] लेकिन झारखंड के नक्सली गरीबों और मजलूमों के अधिकार की लड़ाई लड़ने की आड़ में मोटी कमाई कर रहे हैं। ये पैसे लेकर अपहरण और हत्या के कारोबार में संलिप्त हो गये हैं। ये विकास में

बाधक तो बन ही रहे हैं, गरीबों, शोषितों को भी सता रहे हैं। बड़ी संख्या में बेगुनाह नक्सलवाद के भेंट चढ़ चुके हैं, लेकिन गांव के गरीब और पिछड़ों को कुछ प्राप्त नहीं हुआ। नक्सलवाद के नाम पर, कुछ लोग सामंत बन बैठे हैं और गरीबों को नक्सली बनाकर उनका शोषण और उत्पीड़न कर रहे हैं। नक्सलवाद की ''राजधानी'' बन चुके झारखंड में नक्सली वादातों पर गौर करें, तो पता चलेगा कि वे राज्य के कई बड़े नेताओं की हत्या कर चुके हैं। इनमें से किसी भी हत्या की वजह आपसी विचारधारा का टकराव नहीं था। ये हत्याएं पैसे के लिए की गयीं। जमशेदपुर के सांसद और झारखंड मुक्ति मोर्चा (झामुमो) नेता सुनील कुमार महतो की हत्या हो या निरसा के विधायक गुरुदास चटर्जी, बगोदर के विधायक महेन्द्र सिंह, झारखंड के पूर्व मुख्यमंत्री बाबूलाल मरांडी के बेटे अनुप मरांडी या तमाड़ के जदयू विधायक और झारखंड के पूर्व मंत्री रमेश सिंह मुंडा की हत्या। इनमें से कई लोगों की हत्या में नक्सलियों की संलिप्तता के प्रमाण नहीं मिले हैं। लेकिन, रमेश सिंह मुंडा हत्याकांड की जांच के दौरान नैशनल इन्वेस्टिगेशन एजेंसी (एनआईए) की पूछताछ में पूर्व नक्सली कमांडर कुंदन पाहन ने जो खुलासे किये हैं, उससे नक्सलियों का मूल चरित्र पूरी तरह उजागर हो गया है। जेल में बंद कुंदन पाहन ने कहा है कि रमेश सिंह मुंडा की हत्या के लिए भाकपा माओवादी के पोलित ब्यूरो ने 5 करोड़ रुपये की सुपारी ली थी।[4] इतना ही नहीं, वर्षों से यह बात कही जा रही है कि नक्सली चुनावों में पैसे लेकर लोगों को किसी एक विशेष पार्टी के पक्ष में मतदान करने के लिए लोगों पर दवाब बनाते है, यानी शोषितों और वंचितों को उनका अधिकार दिलाने के लिए लड़ने की बात करने वाले नक्सली, आम लोगों को अपनी इच्छा के अनुरूप अपने मताधिकार का भी उपयोग नहीं करने देते।

➢ झारखण्ड राज्य में नक्सलवाद प्रभावित जिलों की सूची :

1. पलामू
2. गढ़वा
3. चतरा
4. हजारीबाग
5. गिरिडीह
6. बोकारो
7. गुमला
8. लोहरदगा
9. कोडरमा
10. लातेहार
11. पश्चिम सिंहभूम
12. सिमडेगा
13. खरसांवा
14. पूर्वी सिंहभूम
15. खूंटी

➢ आंशिक रूप से प्रभावित जिलों की सूची

1. धनबाद
2. गोड्डा
3. राँची
4. साहेबगंज
5. दुमका
6. देवघर
7. पाकुड
8. जामताडा
9. रामगढ़

स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट, गृह मंत्रालय, भारत सरकार

गत 18 वर्षों में हुए लैंड माइंस विस्फोट और मुठभेड़ :

वर्ष	विस्फोट	मुठभेड़
2001	08	312
2002	08	267
2003	10	322
2004	12	279
2005	08	223
2006	08	307
2007	03	478
2008	03	436
2009	41	512
2010	29	496
2011	06	504
2012	04	404
2013	04	231
2014	06	231
2015	.....	196
2016	04	196
2017	02	159
2018	03	145
2019	.....	025

पुलिस रिकॉर्ड के अनुसार 18 साल में 5688 नक्सली हमले और घटनाओं में अब तक 510 पुलिसकर्मी शहीद हुए हैं, वहीं पुलिसिया कार्रवाई में 846 नक्सली मारे गए हैं।

स्रोत :- दैनिक भास्कर, जून 05, 2019

नक्सल समस्या : गाँधीय समाधान

आज विश्व में शांति व समृद्धि लाने के लिए न पूंजीवाद और न ही समाजवाद कारगर है बल्कि गाँधीवाद ही वह मार्ग है जिससे सम्पूर्ण विश्व में शांति व समृद्धि को स्थापित किया जा सकता है। गांधीजी के रचनात्मक कार्य को धरातल पर उतारकर ही समस्त स्थानीय से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का समाधान निकाला जा सकता है। आज हमारे देश के साथ बहुत से ऐसे देश हैं जो हिंसा के चपेट में हैं और यह समस्या दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। ऐसे समय में गाँधीजी के विचारों और सिद्धांतों की प्रासंगिकता बढ़ जाती है।

यह विचार सामान्य रूप से स्वीकार्य है कि जीवन कभी भी पूर्ण रूप से समस्या रहित नहीं हो सकता है। कोई भी विचारधारा यह जादू दिखाने का दावा नहीं कर सकती। यही कारण है कि गाँधी भी स्वयं को सत्य का अन्वेषक ही स्वीकार करते हैं।

नक्सलवाद की समस्या के समाधान हेतु हम शुरूआती तौर पर अहिंसक लोकशक्ति के संगठन के लिए शांति सेना या 'अंहिसा-वाहिनी' का व्यापक संगठन करें। यह तो आवश्यक है कि शांति शिक्षा या शिक्षा में अहिंसक क्रान्ति पर अमल करें। आज हमारे संस्कार ही हिंसक हो गये हैं। इसका परिष्कार कोई राजनेता या न्यायाधीश, पंडा या पुजारी नहीं कर सकता।[5] वह तो सम्यक शिक्षा में न जीवन है, न जीवन की सुनिश्चितता। ऐसी स्थिति में इस शिक्षा से समाज को नेतृत्व देने की आशा ही एक मृग-मरीचिका है। नक्सलवाद का एक मनोवैज्ञानिक कारण है कि मनुष्य अपनी समस्याओं को दूसरे के ऊपर थोपते हैं। जैसा कि विदित है कि गाँधी ने हमेशा ही साधन व साध्य के मध्य समन्वय पर बल दिया। उन्होने स्पष्ट रूप से पवित्र साध्य को प्राप्त करने के लिए साधन की पवित्रता पर भी जोर दिया। इसका स्पष्ट उदाहरण उनके द्वारा भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के चौरी-चौरा काण्ड के सन्दर्भ में देखा जा सकता है कि जब आन्दोलन अपनी चरमस्थिति में था तब आन्दोलनकारियों के द्वारा थाने को जला दिया गया जिसके प्रतिफलस्वरूप गाँधी ने इस आन्दोलन को वहीं रोक दिया। उनकी इस कार्यवाही की अनेक लोगों ने आलोचना भी की, लेकिन

उनका यह मत था कि हिंसक साधन के द्वारा स्वतन्त्रता को प्राप्त करना स्वराज्य के रास्ते में बाधा है, यह उनकी नैतिक आस्था की चरम सीमा है। गाँधी के सम्पूर्ण चिन्तन में समाज व व्यक्ति के उत्थान के मार्ग में हिंसक साधनों का प्रयोग उनकी मूल धारणा का विरोधी है। अतः गाँधीय चिन्तन को यदि हम सम्पूर्ण रूप से सामाजिक व्यवस्था में समाहित करें तो उन परिस्थितियों का अपने आप ही समाधान सम्भव हो जायेगा जिसके कारण नक्सलवादी गतिविधियों को बढ़ावा मिलता है।

यदि हम गाँधी द्वारा सुझाई गई जीवन व्यवस्था को स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत हैं, तो हम ऐसा समाज बनाएंगे, जिसमें नक्सलवाद की समस्या पैदा हो ही नहीं सकती। भले ही हिंसा पूरी तरह खत्म नहीं होगी, लेकिन संगठित हिंसा की जरूरत नहीं रह जाएगी, क्योंकि किसी भी समूह के साथ कोई अन्याय होने की संभावना न्यूनतम हो जाएगी।[6]

जैसा कि विदित है नक्सलवाद का एक प्रमुख कारण मानव के जीवन मूल्य में क्षरण है। इस जीवन मूल्य में क्षरण के नैतिक संकट का प्रमुख कारण यह है कि मानव जाति अकल्याणप्रद साधनों के विनियोग के माध्यम से लोक कल्याणकारी लक्ष्यों की प्राप्ति की अपेक्षा कर रही है। साधन व साध्य के मध्य विरोधाभास के दुष्परिणाम जीवन के प्रत्येक लक्ष्य में परिलक्षित हो रहे हैं। मनुष्य शांति की कामना के लिये विश्व शक्ति की प्रतिस्पर्धा में फँसा हुआ है।

नक्सलवाद के पनपने का एक प्रमुख मनोवैज्ञनिक कारण ''भय'' है। इस भय से मुक्ति पाने हेतु गांधी द्वारा बताये गये नियम समीचीन प्रतीत होते हैं। उन्होंने अभय की धारणा को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''अभय का अर्थ है सभी प्रकार के भय-मौत का भय, धन लूटे जाने का भय, शस्त्र प्रहार का भय, अप्रतिष्ठा का भय, अपमान का भय आदि से मुक्ति''। इससे मुक्ति हेतु गांधी ने बताया कि ''यदि हम पैसों और शरीर से अपनापन निकाल दे तो भय का सवाल ही नहीं''। इसके बारे में हम अपनी कल्पना बदल लें कि ये मेरे नहीं ईश्वर के हैं, और मैं भी उन्हीं का हूँ। इस जगत में मेरा कुछ भी नहीं है। तो भय का प्रश्न ही नहीं उठता।'' यदि लोगों के मन से वर्तमान एवं भविष्य का भय समाप्त हो जाये तो हथियार उठाने की नौबत ही नहीं आएगी।[7]

नक्सलवाद के उदय का प्रमुख कारण सामाजिक असमानता, बेरोजगारी, श्रम की महत्ता की कमी, आर्थिक असमानता है। यदि इन कमियों को दूर किया जाये तो बहुत हद तक नक्सलवादी समस्या का समाधान किया जा सकता है

और इनको दूर करने के लिए गांधी के ट्रस्टीशिप (न्यासिता का सिद्धांत) का प्रयोग किया जा सकता है।

गांधी ने कहा है कि आर्थिक समानता अहिंसक स्वाधीनता की सर्वकुंजी है। आर्थिक समानता के लिए कार्य करने का मतलब संघर्ष का उन्मूलन। इसका अर्थ है, एक ओर तो उन मुट्ठी भर धनवानों के स्तर को नीचे लाना जिनके हाथ में राष्ट्र की अधिकांश संपति केन्द्रित है और दूसरी ओर आधा पेट भोजन पर जीवन निर्वाह करने वाले लाखों-करोड़ों लोगों के स्तर को उपर उठाना। जब तक धनवानों और लाखों भूखे लोगों के बीच में अंतर नहीं मिटेगा तब तक अहिंसक समाज की कल्पना निरर्थक हैं, इनको सार्थक गाँधी के ट्रस्टीशिप सिद्धांत (न्यास) से किया जा सकता है।

गाँधी के अनुसार जो व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं से अधिक सम्पत्ति एकत्रित करता है, उसे केवल अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु संपत्ति उपयोग करने का अधिकार है। शेष-संपत्ति का प्रबंध उसे एक ट्रस्टी के हैसियत से देखभाल कर समाज कल्याण पर खर्च करना चाहिए।[8]

इसके साथ गाँधी के सर्वोदय सिद्धांत को भी यदि लागू किया जाय तो नक्सलवाद की समस्या का समाधान किया जा सकता है। गांधी के अनुसार जाति का कल्याण, समाज कल्याण में निहित है। अतः सहजीवन कोई परमार्थ का सूत्र नहीं बल्कि जीवन का आधार है। लेकिन सहजीवन की साधना साम्ययोग के बिना संभव नहीं है। इसलिए सर्वोदय विचार की यह मान्यता है कि ''चाहे वकील का काम हो या नाई का, दोनों का मूल्य बराबर है।'' सर्वोदय की दृष्टि से मजदूर किसान या कारीगर की जीवन ही सच्चा एवं सर्वोत्कृष्ट है, ''पसीना बहाकर रोटी खाना ही यज्ञ है।'' गांधी द्वारा प्रतिपादित सर्वोदय विचार में त्याग के द्वारा हृदय परिवर्तन, तर्क एवं अध्ययन द्वारा वैचारिक परिवर्तन, शिक्षा के द्वारा मानवता का परिवर्तन, तथा पुरुषार्थ द्वारा स्तर परिवर्तन पर जोर है। इन विचारों को यदि पूर्ण रुप से आत्मसात् किया जाय तो सामाजिक असमानता स्वयं समाप्त हो जायगी। लोगों में असंतुष्टि की भावना उत्पन्न नहीं होगी।

इसके अलावा गाँधी का अपरिग्रह सिद्धांत नक्सलवाद की समस्या के समाधान का बेहतर विकल्प है। अपरिग्रह तथा अस्तेय परस्पर जुड़ा हुआ सिद्धांत है। इसकी मान्यता है कि यदि किसी वस्तु की उपयोगिता वर्तमान में नहीं है और वह मेरे पास है तो मूलतः वह वस्तु चोरी की गई नहीं भी हो तो भी

वह चोरी की संपत्ति की श्रेणी में रखी जाएगी। अपरिग्रह का अर्थ है भविष्य के लिए व्यवस्था करना। जो भविष्य के लिए संग्रह करता है उसे ईश्वर पर भरोसा नहीं है।

यदि ईश्वर पर भरोसा है तो वह सभी की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति अवश्य करेंगे। यदि प्रत्येक व्यक्ति उतनी ही रखे जितनी उसे आवश्यकता है तो कोई भी अभावग्रस्त नहीं होगा। अमीरी-गरीबी का भेदभाव समाप्त जाएगा जिससे असंतुष्टि की भावना समाप्त होगी। इसी असंतुष्टि का परिणाम नक्सलवाद है। जब सभी संतुष्ट और समान होंगे तो नक्सल की समस्या स्वतः ही समाप्त हो जाएगी।

संदर्भ

1. प्रकाश सिंह, द *नक्सल मुवमेंट इन इंडिया,* साउथ एशिया बुक, 1996
2. अल्फा शाह, *नाइट मार्च ए जर्नी इन टू इंडियाज नक्सल हर्टलैंडस*, साउथ एशिया बुक, 1996
3. बापातित्या पॉल, द *फस्ट नक्सल : ऐन ऑथोराइजड बायोग्राफी ऑफ कानु सन्याल*, सेज इंडिया, 2014, पृ. 139
4. बेला भाटिया, 'द नक्सल मुवमेंट इन सेंट्रल बिहार', *इकोनोमिक एण्ड पॉलिटिक्ल वीकली,* 9 अप्रैल 2005
5. एम. के. गाँधी, द *कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी,* पब्लिकेशन डिवीजन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, दिल्ली, 1978
6. रामजी सिंह, *गाँधी और मानवता का भविष्य*, कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स, दिल्ली, 2001, पृ. 98
7. महात्मा गाँधी, *सत्य के साथ मेरे प्रयोग,* प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
8. एम.के. गाँधी, *मंगल-प्रभात*, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, पृ. 40

डॉ. सतीश कुमार वर्मा
सहायक प्राध्यापक,
राजनीति विज्ञान विभाग,
सरिया कॉलेज, सरिया, गिरिडीह

❑❑❑

भारतीय संस्कृति में निहित पर्यावरण संदेश

● डॉ. रमा शर्मा

विश्व में भौतिक उन्नति के लिए नये कीर्तिमान स्थापित हो रहे हैं। व्यक्ति जहाँ चन्द्रमा से बहुत ऊपर तक पहुँच गया है वहीं समुद्र तल की गहराईयों की सीमाओं को भी लांघ चुका है। व्यक्ति विकास के नित नये साधनों का आविष्कार किया जा रहा है। किन्तु देखने में आ रहा है कि दुनिया भर में स्वार्थ सिद्धि और भौतिक उन्नति करते-करते व्यक्ति अपने प्राकृतिक सामाजिक, सांस्कृतिक व नैतिक उत्तरदायित्व को भूलता जा रहा है। वह यह भी भूल जाता है कि भगवान द्वारा निर्मित इस प्रकृति के संसाधनों पर सृष्टि के अन्य प्राणियों का भी उतना ही अधिकार है जितना कि उसका। एक सुसंस्कृत समाज में रहने वाले संस्कारयुक्त व्यक्ति के प्रत्येक क्रिया-कलाप में विश्व कल्याण की भावना सन्निहित रहती है।[1] विकास और प्राकृतिक पर्यावरण के बीच विरोधाभास हो ये जरूरी नहीं, न ही विकास के कारण पर्यावरण और संसाधन हमेशा के लिए नष्ट किया जावे, अगर हम अपने पर्यावरण को बेहतर समझें तो विकास के लिए टिकाऊ प्रबंधन भी कर सकते हैं। गांधीजी ने कहा था कि **हमारे पास प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता की पूर्ति के लिए बहुत कुछ है लेकिन किसी एक के लालच की पूर्ति के लिए अपर्याप्त है**।[2]

भारतीय संस्कृति जो वैदिक सभ्यता पर टिकी हुई है उसे हम विश्व की सर्वश्रेष्ठ संस्कृति कह सकते हैं। हमारी संस्कृति में पर्यावरण संरक्षण का संदेश समाहित है। वेदों में बताई गई जीवन शैली के चलते हम अपने पर्यावरण को अपने तथा प्रकृति के अनुरूप बनाये रख सकते हैं। वेदों के अनुसार प्रकृति ही सबसे शक्तिशाली है। क्योंकि यही सृजन करती है और यही विनाश भी कर दिखाती है।[3]

भारतीय संस्कृति दर्शन सदैव प्रकृति का पुजारी रहा है। इसमें कहा गया है कि प्राकृतिक संसाधनों का उचित उपयोग तो करें किन्तु शोषण की स्पष्ट मनाही

है। शायद इसी कारण हमारे यहाँ पेड़-पौधों, नदियों तालाबों, खेत-खलिहानों, पशु-पक्षियों, कूप तथा बावड़ियों इत्यादि को समय-समय पर पूजे जाने का विधान है जिससे उनमें हमारी आस्था गहरी बनी रहे और उनके अनावश्यक शोषण से बचें।[4]

पर्यावरण का प्रभावी संरक्षण और उसे कदापि हानि न पहुँचाने का सम्पूर्ण विवरण हमारे प्राचीन ग्रंथों में समझाया गया है। ऋग्वेद का संदेश हैं ''मित्रस्यहम चक्षुषा सर्वानि भूतानि समीक्षे'' अर्थात् हम प्रकृति की समूची कृतियों को मित्र की दृष्टि से देखें। ऋग्वेद में अश्विन से प्रार्थना में उनका आभार जताते हुए कहा गया है कि हमें सूर्य की अत्यन्त घातक हानिकारक किरणों तथा ताप से बचाने के लिए आपने जो संरक्षण प्रदान किया उसके हम ऋणी हैं यह वर्तमान ओजोन परत के सिद्धान्त से जुड़ा हुआ प्रतीत होता है।[5] पृथ्वी की सर्वव्यापकता को बताते हुए मंत्र में कहा गया है।

गर्भो अस्योषधीनां गर्भो वनस्पतीनाम्
गर्भो विश्वस्य भूतस्याऽग्ने गर्भो अपामसि

अर्थात् हे अग्ने, तुम औषधियों के गर्भ में हो वनस्पतियों के गर्भ में हो, सब भूतों के गर्भ में हो। इससे तात्पर्य है कि न केवल व्यापकता किन्तु वृक्ष, लता का बढ़ना, फैलना मौलिक तत्त्व रूप अग्नि के कारण होता है।[6] अथर्ववेद के अनुसार पृथ्वी का हृदय केन्द्र बिन्दु सूर्य है, जहाँ इसको शक्ति मिलती है द्युलोक में अग्नि सूर्य रूप में विद्यमान है पृथ्वी को माता द्युलोक को पिता कहा है।[7] व्योम रूपी आकाश (द्यौ) पृथ्वी को चारों ओर से व्याप्त इस आवरण (ओजोन परत) को हानिकारक उत्सर्जित गैसों से छिन्न करते हैं तो पृथ्वी का हृदय उच्छेदित होता है। ऋग्वेद में सूर्य को जगत की आत्मा कहा है—**सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुशश्च।**[8] ऋग्वेद के गायत्री मंत्र में सूर्य से सद्बुद्धि देने की प्रार्थना है **तत्सवितुर्वरिण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो योनः प्रचोदयात्।**[9] अर्थात् सविता देव का वरेण्य तेज जिसकी हम उपासना करते हैं वह हमारी बुद्धियों को प्रेरित करे। यह प्रदूषण को छोड़कर संरक्षण देने की बुद्धि प्रदान करता है।

चारों वेदों में मनुष्य द्वारा प्रकृति से की गई छेड़छाड़ के कारण बिगड़ते हुए चक्र का वर्णन है। भारतीय संस्कृति में उन घटक तत्त्वों के संरक्षण, संवर्धन और पोषक की कामना है जिससे विश्व कल्याण हो, अस्तित्व की रक्षा हो। सम्पूर्ण वैदिक साहित्य वेद, ब्राह्मण, उपनिषद्, स्मृति ग्रंथ, पुराण एवं लौकिक साहित्य,

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश के प्रदूषण रहित होने की कामना करता है। **ओम् द्यौ शान्तिरन्तरिक्ष 'शान्तिः पृथिवी 'शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्ति विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म 'शान्तिः सर्वं शान्तिः 'शान्तिरेव 'शान्तिः सा मा 'शान्तिरेधि।**[10]

पुराणों के अनुसार नदियों एवं पर्वतों को भी पूज्य एवं आदरणीय बताया गया है। प्रत्यक्ष रूप से उन्हें तीर्थ की संज्ञा देकर उन्हें भगवान, सन्त, भक्त, ऋषि-मुनि महात्माओं की तपस्थलियों और साधना का क्षेत्र बना दिया, वहीं दूसरी ओर अप्रत्यक्ष रूप से उनके प्रदूषण की संभावनाओं पर नियंत्रण कर उनके संरक्षण के लिए एक सरल एवं सर्व व्यापक दिशा प्रदान की।

वेदों में जल की उपयोगिता और उसके महत्त्व पर बहुत बल दिया गया है। जल जीवन है, अमृत है भेषज है, रोगनाशक है और आयुवर्धक है। जल को दूषित करना पाप माना गया है। जल के विषय में कहा गया है कि जल से सभी रोग नष्ट होते हैं। जल सर्वोत्तम वैद्य है। जल, हृदय के रोगों को भी दूर करता है। जल को ईश्वरीय वरदान माना जाता है। अनेक मंत्रों में जल को दूषित न करने का आदेश दिया गया है। जल और वृक्ष वनस्पतियों को कभी हानि न पहुंचावें। पुराणों में तो यहाँ तक कहा गया है कि नदी के किनारे या नदी में जो थूकता है, मूत्र करता है या शौच आदि करता है, वह नरक में जाता है और उसे ब्रह्महत्या का पाप लगता है।[11]

अप्सु अन्तर्विश्वानि भेषजा।
आपश्च विश्वभेषजीः[12]
माऽपो हिंसीः माऔषधीहिंसीः।[13]
अपः पिन्व, औषधीर्जिन्व।[14]
मूत्र वाऽथ पुरीषं का गंगा तीरे करोति यः।
स याति नरक घोरं ब्रह्महत्यां च विन्दति[15]

पुराण के हिमाद्रीय व्रत खण्ड के अनुसार पंचवटी अर्थात् सुनिश्चित दूरी पर लगाये गये पाँच वृक्षों के समूह का विशिष्ट वैज्ञानिक, औषधीय और पौराणिक महत्त्व है। पूर्व दिशा में पीपल, पश्चिम में बरगद, दक्षिण में आंवला, उत्तर में बेल और दक्षिण पूर्व में अशोक के वृक्ष लगाने की वैज्ञानिक क्रिया ही पंचवटी है। सेन्ट्रल ड्रग रिसर्च इंस्टीट्यूट के शोध के अनुसार पीपल 1800 कि.ग्रा. ऑक्सीजन घण्टे की दर से उत्सर्जित करता है। बरगद प्राकृतिक वातानुकूलन का कार्य करता है। विटामिन सी से भरपूर आंवला रोग प्रतिरोधक

क्षमता बढ़ाता है। बेल पाचन तंत्र को सुधारता है। अशोक वृक्ष महिलाओं को निरोग रखता है। अश्वत्थ (पीपल) की महत्ता बताते हुए श्री कृष्ण कहते हैं—

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां मैं वृक्षों में अश्वत्थ (पीपल) हूँ स्पष्ट है पीपल 24 घंटे आँक्सीजन देता है इसलिए इसके संरक्षण के लिए प्रतिदिन पूजा करने का विधान है, पीपल को देव कहा है, वटवृक्ष में शिवशक्ति का निवास बताया गया है जिसकी आयु हजारों वर्ष है। अनेक व्रत उपवास, पर्वो के माध्यम से अलग-अलग वृक्षों को लगाना, पूजा के माध्यम से संरक्षण करने का आदेश दिया है, सम्पूर्ण धर्म शास्त्र इसी की व्याख्या करता है।

यजुर्वेद में पृथ्वी को ऊर्जा देने वाली तप्तायनी तथा धन सम्पदा देने वाली कहकर प्रार्थना की गई है वह हमें साधन हीनता तथा दीनता की व्यथा पीड़ा से बचाएं। **तप्तायनी में ऽसि वित्तायनी मेऽस्यवतान्मा नाथितादअवतान्मा व्यथितात्।**[16]

अथर्ववेद में पृथ्वी को अपनी सम्पूर्ण सम्पदा प्रतिष्ठित कर विश्व के समस्त जीवों का भरण पोषण करने वाली कहा गया है। **विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगतो निवेषनी**[17]

पृथ्वी को माता के रूप में देखा गया है—**माता भूमिः पुत्रो ऽहं पृथिव्याः।**[18] अर्थात् यह भूमि माता के समान पोषक है और मैं पुत्र के समान इसका रक्षक हूँ। इसलिए यह संदेश दिया गया है कि मानव पृथ्वी का दोहन करते समय उसे चोट नहीं पहुंचाएं।

प्राचीन समय में भूमि प्रदूषित होने के कारण नहीं थे, इसलिए ऋषियों ने पवित्रता पर बल दिया। भूमि शुद्धि के लिए ब्रह्म पुराण का कथन है—भूमि की विशुद्धि दाह मार्जन (बुहारी लगाना) और गौओं के बैठने से हो जाती है **लेपादुल्लेखनात्सेकाद समार्जनादिना।**[19]

वेदों में वायु को अमृत कहा गया है। वायु जीवन शक्ति देता है इसको भेषज या औषधि कहा गया है। यह प्राण शक्ति देता है और अपान 'शक्ति के द्वारा सभी दोषों को बाहर निकालता है। ऋग्वेद में कहा गया है कि हम ऐसा कोई काम न करें, जिससे वायुरूपी अमृत की कमी हो। यदि हम प्राणवायु को कम करते हैं तो हम स्वयं हमारे लिए मृत्यु का संकट तैयार करते हैं।

यददो वात ते गृहे अमृतस्य निधिर्हितः।
तेन नो देहि जीवसे।[20]

नू चिन्नु वायोरमृतं वि दस्येत्।[21]
आ बात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद् रपः।
त्वं हि विश्वभेषजः।[22]

यजुर्वेद में यज्ञों का विस्तार से वर्णन है। श्रीमद्भगवद्गीता में कहा गया है कि प्रजापति ब्रह्मा ने प्रजाओं का निर्माण कर कहा, तुम लोग यज्ञ द्वारा शुद्धि को प्राप्त करो और यह यज्ञ तुमको इच्छित वस्तु देने वाला होवे।[23] यज्ञ के धुएं से रोगों एवं कीड़ों का नाश होता है वायु शुद्ध होती है। यज्ञ से वर्षा होती है वर्षा से अन्न होता है जिससे प्राणियों के प्राण चलते हैं इसलिए कल्याणकारी जल की कामना करते हुए ऋषि कहता है—**शिवा नः सन्तु आयुषे सन्त्वायुषे शिवा भवन्तु मातरः**।[24] यज्ञ करने से पहले जल से आचमन कर आंतरिक शुद्धि का विधान है। अतः जल को दूषित नहीं करने के लिए कहा है—**मा नो हिंसीः मा ओषधिः हिंसी**।[25] ऋग्वेद में कहा गया है मनुष्य अपने उत्तम कर्मों से एक ओर ऊँचे प्रदेशों में गाय आदि के लिए तृण उत्पन्न करे वहीं निचले प्रदेशों में जल को सुरक्षित रखे।[26]

भारतीय दर्शन में अनेक जीव हिन्दू देवी-देवताओं के वाहन के रूप में प्रस्तुत किये जाते रहे हैं तथा भगवान ने विभिन्न जीव अवतारों के माध्यम से अनेकों असुरों का संहार कर सृष्टि को बचाया है। इन जीवों में भगवान का वास होने के कारण हिन्दू धर्म के लोग इनको पूजते हैं और हानि होने से बचाते हैं।[27] श्री कृष्ण ने विभूतियोग में स्वयं को सृष्टि का अधिष्ठाता एवं उसमें विद्यमान रहने वाली शक्ति को आत्मा बताया गया है इसलिए स्वार्थ से ऊपर उठकर ईश्वरीय भाव से सभी वस्तुओं को देखने एवं संरक्षण करते हुए कर्मफल का त्याग करते हुए कर्म करने की प्रेरणा देता है जिससे हम प्रकृति का संरक्षण कर सकें।[28]

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषाः विश्ववेदाः।
स्वस्ति न स्ताक्ष्यों ऽ अस्ष्टिनेमिः स्वस्ति नो वृहस्पतिः दधातु।[29]

अतः इन्द्र, विश्ववेद, पक्षी गरूड़ वृक्षस्पति से सभी का कल्याण करने की कामना है जिससे हम सौ वर्षों तक जीएं, देखें, सुनें, बोलें।

भारतवर्ष ही नहीं विश्वभर में नदियों के किनारे अनेक सभ्यताओं का जन्म इस बात का स्पष्ट प्रमाण है। वैदिक सहित्य में मानव जीवन अस्तित्व, पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, सूर्य, नदी, वृक्ष और पशु पक्षियों के साथ स्वीकारा गया है। वेद कहते हैं कि देवताओं का पूजन किसी वनस्पति के बिना

नहीं किया जा सकता है। गणेश जी को दूर्वा, शिव को बिल्व पत्र, विष्णुजी को तुलसी दल अर्पित करने के अलावा वट वृक्ष और पीपल को शुभ मानकर उसमें जल चढ़ाना और पूजन प्रकृति प्रेम को मनुष्य से जोड़ना ही है। कुछ वर्ष पूर्व नेशनल जियोग्राफिकल सोसायटी द्वारा किये गये एक सर्वेक्षण में भी इसे स्वीकार किया जा चुका है कि हिन्दू धर्मावलंबियों का रहन-सहन तथा व्रत-पर्व सर्वाधिक ईको-फ्रेंडली है। हिन्दू एक जीवन शैली है जो प्रकृति का संरक्षण करती है।[30]

संदर्भ :

1. विनोद बंसल, ''वैश्विक उन्नति संदर्भ का आधार भारतीय संस्कृति'' *विद्या भारती प्रदीपिका,* वर्ष 39, अंक 3, अप्रैल-जून, 2019
2. देवेश कुमार सोनी, ''हम और पर्यावरण'' *विद्या भारती प्रदीपिका,* वर्ष-39, अंक-3, अप्रैल से जून, 2019
3. सूर्यकान्त मिश्रा, ''प्रकृति से निकटता प्रदूषण का विकल्प'' *पर्यावरण ऊर्जा टाइम्स,* वर्ष 21, अंक 5, 10 जून, 2018
4. विनोद बंसल, ''वैश्विक उन्नति का आधार भारतीय संस्कृति'' पूर्वोक्त।
5. एस.एस. बिस्सा, ''धर्म में छिपा पर्यावरण का मर्म'', *राजस्थान पत्रिका,* 5 जून, 2016
6. *यजुर्वेद,* 12.37, श्री दयानन्द सरस्वती परोपकारिणी सभा, वैदिक मंत्रालय अजमेर, 1970
7. *ऋग्वेद,* 10.89.3, श्री दयानन्द सरस्वती परोपकारिणी सभा, वैदिक मंत्रालय, अजमेर, 1976
8. *ऋग्वेद,* 1.115.1, पूर्वोक्त
9. ऋग्वेद, 3.62.10, पूर्वोक्त
10. *यजुर्वेद,* 36.17, पूर्वोक्त
11. वेदों में लोककल्याण।
12. *ऋग्वेद,* 1.23.20।
13. *यजुर्वेद,* 6.22
14. *यजुर्वेद,* 14.8
15. पद्मपुराण क्रियायोग 8.8 से 10, गीताप्रेस गोरखपुर।
16. *यजुर्वेद,* 5.9

17. *अर्थववेद*, 12.16
18. मोतीलाल जोशी, संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण चेतना।
19. *ब्रह्म पुराण*, 11.24, गीताप्रेस गोरखपुर।
20. *ऋग्वेद* 10.186.3
21. *ऋग्वेद* 6.37.3
22. *अर्थववेद* 4.13.3
23. *श्रीमद्भगवदगीता*, 3.10 गीताप्रेस गोरखपुर, 2008।
24. *अर्थववेद*, 10.140.3
25. *यजुर्वेद*, 6.22, 14.8
26. ऋग्वेद, 1.161.11
27. मीना राठौड़, *बुद्धि सागर*, 2013 ''पर्यावरण शिक्षा और जागरूकता'', अग्रवाल पब्लिकेशन।
28. *श्रीमद्भगवद्गीता* 10.19 से 42
29. यजुर्वेद 25.19
30. सूर्यकान्त मिश्रा, 'प्रकृति से निकटता, प्रदूषण का विकल्प', पूर्वोक्त।

डॉ. रमा शर्मा
व्याख्याता (सी.टी.ई.)
बुनियादी शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय,
सरदार शहर, चूरू, राजस्थान

❑❑❑

भारतीय संस्कृति में अहिंसा व शांति शिक्षा की प्रासंगिकता

● डॉ. अविनाश पारीक

भारतीय संस्कृति में अहिंसा का बहुत महत्त्व है, तो पारिवारिक व सामाजिक जीवन में भी अहिंसा का कम महत्त्व नहीं है। अहिंसा का आध्यात्मिक पक्ष है— भाव विशुद्धि, संयम और संवेदनशीलता का विकास। उसका सामाजिक पक्ष है— सामुदायिक चेतना का विकास। इस उभयपक्षीय विकास की दिशा में चिंतन, प्रयत्न और प्रयोग चलते रहें, तो जीवन के हर क्षेत्र में अहिंसा की प्रतिष्ठा हो सकती है। अहिंसा की प्रतिष्ठा होने पर बैर-विरोध का परित्याग हो जाता है, जीवन का हर क्षण शांति, प्रेम और मैत्री की सौरभ से सुरभित बना रहता है। जीवन की इससे बड़ी उपलब्धि क्या हो सकती है? दर्शन एवं शिक्षा के मध्य घनिष्ठ सम्बन्धों का विद्यमान होना भारतीय संस्कृति का उज्ज्वल पक्ष है। दर्शन मानव-जीवन के विभिन्न पक्षों पर विचार करता है उसके लक्ष्य-संधारित करता है। आज हम जिस दुनिया में रह रहे हैं उसमें शांति की आवश्यकता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार शिक्षा का अर्थ मुक्ति प्रदान करना है। **सा विद्या या विमुक्तये शिक्षा** व्यक्ति की बुद्धि को परिष्कृत परिमार्जित करती है। अज्ञानांधकार से निकालकर ज्ञान के प्रकाश की ओर ले जाती है। अत: शांति शिक्षा एक सकारात्मक दृष्टिकोण है जिसका अर्थ ऐसे नागरिकों का निर्माण करना है जो अहिंसा, सामाजिक न्याय, भ्रातृत्व व समानता आदि सकारात्मक गुणों को अपने जीवन का अंग बनाएं और हिंसा, शोषण, सामाजिक अन्याय, द्वेष, परस्पर वैमनस्य और असहयोग आदि नकारात्मक प्रवृत्तियों से दूर रहें।

नि:संदेह भारतीय संस्कृति के अनुसार शिक्षा के माध्यम से शांति एवं अहिंसा को स्थापित करने के लक्ष्य की पूर्ति सरलता से की जा सकती है। आज विद्यालय एवं महाविद्यालयों में विद्यार्थियों को ऐसी शिक्षा देने की आवश्यकता है जिससे उनमें आतंकवाद, हिंसा, विद्वेष जैसी अवांछनीय घटनाओं के प्रति नकारात्मक

दृष्टिकोण विकसित हो तथा परस्पर सौहार्द्र, सह-अस्तित्व, सहयोग, सहिष्णुता, भाईचारा जैसे सकारात्मक गुण पल्लवित हो सके। शांति के संदेश को हृदयंगम करके राष्ट्र के भावी नागरिक समाज में शांति बनाकर शांतिदूत का कार्य बखूबी कर सकते हैं। शांति शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से नये नागरिकों व नेताओं की प्रत्येक पीढ़ी में हिंसा व युद्ध में परिणित होने वाली कलह की आवृत्ति व मात्रा को कम करने के लिए आवश्यक सोच, समझदारी व कौशल विकसित करना अपेक्षित है। इससे समाज की ऊर्जा व बौद्धिक क्षमता तथा भौतिक संसाधनों का प्रयोग शांति की संघृत तथा प्रगतिशील संस्कृति के निर्माण में सम्भव हो सकेगा। भारतीय दर्शन परम्परा ने अपने समृद्ध विचारों व मूल्यों से समस्त संसार का जगद्गुरु के रूप में नेतृत्व किया। हम शांति और अहिंसा के द्वारा समस्त समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। जिसकी आज इस भयाक्रांत विश्व को अत्यधिक आवश्यकता है।

आज का मनुष्य हिंसा की समस्या से आक्रान्त हैं, व्यथित है, चिन्तित हैं। वह चाहता हैं कि हिंसा घटे, अपराध मिटे, अहिंसा का विकास हो, सर्वत्र शांति का साम्राज्य हो। यह चाह तभी सफल हो सकती है, जब अहिंसा भारतीय ग्रन्थों एवं पंथों से निकलकर जीवन व्यवहार की विषय वस्तु बन जाये। आज स्थिति यह है कि हिंसा की समस्या जिस प्रबलता से बढ़ रही है, उसी गति से अहिंसा का विकास नहीं हो रहा है। भारतीय संस्कृति में अहिंसा एवं शांति का बहुत महत्त्व है, तो पारिवारिक/सामाजिक जीवन में भी अहिंसा एवं शांति का महत्त्व कम नहीं है। नैतिकता के बिना अहिंसा सिद्ध नहीं हो सकती और अहिंसा के बिना नैतिकता प्रतिष्ठापित नहीं हो सकती है।[1]

भारतीय संस्कृति के सम्बन्ध में प्रो. अजहर हाशमी ने कहा था, ''भारतीय संस्कृति नैतिकता की नदी में मानवीय मूल्यों की नौका है, जिसे परमार्थ का मांझी भक्ति की पतवार से आगे बढ़ाता है। भारतीय संस्कृति न किसी मौलवी की नमाज है, न किसी पण्डित का तिलक, न किसी गुरुद्वारे की अरदास है, न ईसाईयत का क्रॉस है। यह तो मानवीय मूल्यों का लगातार विस्तार है।''[2] अत: दर्शन एवं शिक्षा के मध्य घनिष्ठ सम्बन्धों का विद्यमान होना भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल पक्ष को स्पष्ट करना है। दर्शन मानव जीवन के विविध पक्षों पर विचार करता है एवं उसके लक्ष्य को संधारित करता है। आज हम जिस दुनियां में रह रहे हैं उसमें शांति की आवश्यकता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार शिक्षा का अर्थ मुक्ति प्रदान करना है। 'सा विद्याया विमुक्तये' शिक्षा व्यक्ति की बुद्धि को परिष्कृत एवं परिमार्जित करती है। अज्ञानान्धकार से निकाल कर ज्ञान के प्रकाश की ओर ले जाती है। अत:

शान्ति शिक्षा एक सकारात्मक दृष्टिकोण है जिसका अर्थ ऐसे नागरिकों का निर्माण करना है जो अहिंसा, सामाजिक न्याय, भ्रातृत्व व समानता आदि सकारात्मक गुणों को अपने जीवन का अंग बनाए और हिंसा, शोषण, सामाजिक अन्याय, द्वेष, परस्पर वैमनस्य और असहयोग आदि नकारात्मक प्रवृत्तियों से दूर रहे।

आचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार अहिंसा के दो आयाम हैं—प्रतिरोध और प्रतिकार। अहिंसा में प्रतिरोध और प्रतिकार की शक्ति नहीं रही तो अहिंसक निर्वीय बन जाएगा, शक्ति संतुलन हिंसा के हाथ में चला जाएगा। आज जन-साधारण में अहिंसा के प्रति जो भ्रम है, वह निरस्त होना चाहिए। उसे यह अनुभव होना चाहिए कि अहिंसा निर्वीय नहीं है। उसमें प्रतिरोध और प्रतिकार की हिंसा की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म और तीव्र है। अहिंसा में विश्वास करने वाला हिंसा का प्रतिरोध और प्रतिकार उससे अप्रभावित होकर करता है, हिंसा की परिस्थिति को मान्यता न देते हुए करता है। हिंसा और अहिंसा परस्पर विजातीय हैं। इसलिए अहिंसा की प्रतिरोध-शक्ति है। स्वतंत्र चेतना का अनावृत्तीकरण और उसकी प्रतिकार शक्ति है। प्रेम एवं शान्ति का विस्तार और उतना विस्तार, जिसमें शून्य न हो, अप्रीति के लिए कोई अवकाश न हो।[3]

किसी भी संस्कृति को नष्ट करना हो तो उसकी भाषा को प्रदूषित कर दो और भाषा में जो महत्त्वपूर्ण शब्द हैं उनका छेदन कर दो, उनको प्रदूषित कर दो और हमारे साथ यही हो रहा है। भारतीय दर्शनों के विषय में हमारी धारणा थी वह शास्त्रों के अलावा हमारे लोक-जीवन में, लोकभाषा में, लोक व्यवहार में भी विद्यमान थी, उसको धीरे-धीरे करके हम लोग भूलते जा रहे हैं। वेद को प्रकट करने वाला तत्त्व ब्रह्म है और ब्रह्म ही वेद है। भारतीय संस्कृति एवं अहिंसा मूलतः वैदिक संस्कृति पर आधृत है[14] वेद, वे अमूल्य निधि स्वरूप हैं, जिनके प्रत्येक मंत्र में अध्यात्म, विज्ञान, सामाजिकता, राष्ट्रीयता, एकता एवं अहिंसा इत्यादि का भाव सन्निहित है। वैदिक साहित्य के मंत्र तत्कालीन समय के तुल्य ही सम्प्रति भी पूर्णतः प्रासंगिक प्रतीत होते हैं। आज भारत देश ही नहीं विश्व के अनेक देश हिंसा एवं अशांति जैसी विभिन्न समस्याओं से ग्रसित हैं। इन समस्याओं के निराकरण के लिए **संगच्छध्व संवध्वं संश्वो मंनासि जानताम** तथा **तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु** से अनुप्राणित वैदिक संस्कृति हमें अहिंसा एवं शांति को समरस बनाने का अमृत पाथेय प्रदान करती है।

अहिंसा और आत्मनिरीक्षण—ये दोनों पृथक नहीं हैं। हिंसा और परदर्शन को भी पृथक नहीं किया जा सकता। जिस व्यक्ति ने सदा दूसरों को देखा है, पदार्थ को देखा है, वह हिंसा में उतर जाएगा। जिसने अपने आपको देखना शुरू किया

है, अपना दर्शन, अपना निरीक्षण किया है, वह हिंसा से दूर होता चला जाएगा, उसके जीवन में अहिंसा उतरती चली जाएगी। आज पूरे विश्व में अहिंसा एक चर्चित शब्द बन गया है। हजारों वर्षों पहले अहिंसा की शिक्षा, प्रशिक्षण और सिद्धान्त बतलाए गए हैं। महात्मा गांधी ने अहिंसा को एक व्यापक स्वरूप प्रदान किया और विश्व के सामने अहिंसा की शक्ति को तेजस्वी रूप में प्रस्तुत किया। वर्तमान दो-तीन दशकों में जिस प्रकार हिंसा बढ़ी है, अहिंसा की अभीप्सा और अधिक जागृत हुई है।[5]

गांधी दर्शन के अनुसार अहिंसा की अवधारणा में धार्मिक, राजनीतिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक आदि सभी पक्ष समाहित हैं। इस कारण वे किसी समाज दार्शनिक की भांति अहिंसा का वह संकुचित अर्थ नहीं लेते, जिसमें केवल मानवीय हिंसा को ही हिंसा माना जाता है। गांधी की अहिंसा में केवल मानवीय हिंसा ही नहीं, जैविक और मानसिक हिंसा भी समाहित है। वे किसी को मानसिक या भावनात्मक रूप से अकारण क्लेश पहुंचाना, किसी के प्रति ईर्ष्या या द्वेष रखना, किसी के प्रति बुरा सोचना, अनुचित स्वामित्व, असत्य संभाषण आदि ऐसी मानसिक वृत्तियों को भी हिंसा मानते हैं, जिनसे प्रत्यक्षत: किसी प्रकार की हिंसा दृष्टिगोचर नहीं होती। अपनी अहिंसा में वे सूक्ष्मतम जीवों तक का ध्यान रखने में जैनियों के तुल्य हैं। निश्चय ही उनकी अहिंसा में एक साथ सूक्ष्मता और व्यापकता, गहनता और उदात्तता, व्यावहारिकता और अध्यात्मिकता समाहित हैं।[6]

हिन्दू धर्म के मूल मूल्यों से निर्मित हुए दो और धर्म हैं—जैन और बौद्ध धर्म। दोनों ही धर्मों का मूल अहिंसा है। स्वाभाविक हैं कि इन धर्मों का पालन करने वालों के लिए व्यवहार में भी अहिंसा का पालन आवश्यक होगा। भगवान महावीर, जो चौबीसवें तीर्थंकर हुए, उन्होंने त्याग और संयम के दो मुख्य नियम प्रस्थापित किए। इन नियमों में से एक और नियम अपरिग्रह निष्पन्न हुआ। आर्थिक व्यवहारों में अपरिग्रह का पालन करने से अहिंसा अपने आप स्थापित होती है।[7] महावीर स्वामी के दर्शन में हिंसा और परिग्रह दोनों ही आत्मा और चेतना के विकास में बाधक हैं। इस तरह अपरिग्रह ही महावीर स्वामी के आर्थिक व्यवहारों में नीति का बीज-मंत्र है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी लिखते हैं कि, ''हिंसा और परिग्रह तथा अहिंसा और अपरिग्रह अलग शब्द प्रतीत होते हैं और उनके अर्थ भी अलग मालूम होते हैं। परिग्रह और अपरिग्रह कारण है, हिंसा और अहिंसा परिणाम है।[8]

बौद्ध दर्शन एवं साहित्य में मनुष्य के दैनिक व्यवहार पर चर्चा की गई है। बौद्ध धर्म का मूल मूल्य करुणा है। इस मूल्य से अहिंसा रूपी निर्मलता प्रकट होती है। बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में ब्रिटिश अर्थशास्त्री ई.एफ. शुमाकर ने ''बुद्धिस्ट

इकोनॉमिक्स'' को प्रचलित किया। उसकी समझ में बौद्ध धर्म को अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों में मानव सभ्यता का निर्मल एवं पवित्र अहिंसक मानव चरित्र माना है। बुद्ध के मूल उपदेशों के अनुसार कोई भी आजीविका या व्यवसाय जो किसी अन्य जीव को हानि अथवा पीड़ा पहुंचाएं अथवा व्यक्ति को पतन की ओर ले जाए, नहीं करना चाहिए। आजीविका नेक, शांतिमय तथा हानिरहित अहिंसक उपायों द्वारा ही प्राप्त करनी चाहिए।

बीसवीं सदी के आरम्भ तक पश्चिमी सभ्यता के जो लक्षण गांधीजी को दिखें और उन्होंने समझा, उसका बयान उन्होंने 'हिन्द स्वराज' में किया। उनका मुद्दा यह था कि पश्चिमी संस्कृति के मानव का मूल लक्ष्य हिंसक एवं अशांति के द्वारा शरीर सुख और भौतिक सम्पन्नता प्राप्त करना है।[9] एक तरह से कहें तो पश्चिमी समाज ईमान-धर्म से विखण्डित हो गया। गांधीजी ने अपनी आलोचना में यह स्पष्ट लिखा था कि—सभ्यता के समर्थक साफ कहते हैं कि उनका काम लोगों को धर्म एवं शांति का मार्ग दिखाना नहीं है। धर्म एवं शांति तो ढोंग है, ऐसा कुछ लोग मानते हैं। शरीर का सुख कैसे मिले, आज की सभ्यता यह ढूंढ़ती है और यही देने की कोशिश करती है।[10] गांधीजी को ''हिन्द स्वराज'' लिखते समय तक यह दिखाई दे रहा था कि इस भौतिक सम्पन्नता को प्राप्त करने की कोशिशों में व्यक्ति और देश हिंसा में लिप्त हो जाएंगें और मानवता खतरे में पड़ जायेगी।

गांधी दर्शन एवं साहित्य के आधार पर यह कहा जा सकता हैं कि नैतिकता के सन्दर्भ में गांधीजी ने अहिंसा को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। गांधीजी के मतानुसार अहिंसा सवोच्च धर्म और सर्वोच्च नैतिकता है। अहिंसा का धर्म केवल ऋषियों एवं सन्तों के लिए ही नहीं है, यह सर्वसाधारण जनता के लिए भी है।[11] अहिंसा मानव जाति का धर्म है, जिस प्रकार हिंसा हिंसक पशुओं का धर्म है।[12] गांधीजी के अनुसार यह आध्यात्मिक एकता के सिद्धान्त का विनियोग है। उनके मत में अहिंसा का मूलभूत सिद्धान्त इसी पर आधारित हैं कि जो एक के लिए श्रेयस्कर है वह समान भाव से सारे विश्व के लिए श्रेयस्कर है।[13] ईश्वर और सत्य को प्राप्त करने के लिए प्रेम सबसे बड़ा साधन है जो अहिंसा का भावात्मक रूप कहा जा सकता है। इसलिए जो कार्य बड़े से बड़े तर्क और शक्ति के द्वारा नहीं किए जा सकते वे अहिंसा और प्रेम रूपी शांति के बल पर आसानी से किए जा सकते हैं।

जीवन के रण में संसार ने वर्तमान में युद्ध व अस्त्र-शस्त्रों के अनेक रूप देखे हैं। जब मनुष्य आहार संग्राहक युग से शिकारी युग में पहुंचा तब उसने पत्थर के हथियार बनाए। उसी वन्य युग के शिखर पर उसने तीर-धनुष से युद्ध लड़े। फिर राजतंत्रों के युग में तलवार उसकी निर्णायक हथियार बनी। फिर बारूद की खोज

हुई और उसने आग्नेयास्त्र बनाने में कुशलता प्राप्त की। बन्दूकों ने तोपों और तोपों ने आधुनिक टेंकों का रूप ले लिया। फिर परमाणु बम भी बने। भौतिकीय युद्धों से आगे बढ़कर हमने रासायनिक और जैविक युद्ध के लिए भी क्रमशः रासायनिक व जैविक हथियार तैयार कर लिए हैं। ये सभी अस्त्र-शस्त्र युद्ध में विध्वंसक भी रहे हैं और सफल भी। मगर गांधीजी ने पहली बार शांति के लिए सृजनात्मक और अहिंसात्मक युद्ध का प्रचलन किया। उनके हाथ में भी लाठी थी, मगर उन्होंने चरखे से शांति के लिए लड़ाई लड़ी। उनकी खादी आजादी का हथियार बन गई।[14]

विश्व शांति के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ बना। अब झटपट युद्ध नहीं होते। पहले चर्चा होती है, चिंतन होता है, इससे प्रायः आवेश शांत हो जाता है। युद्ध आवेश में शुरू होते हैं। संयुक्त राष्ट्रसंघ के द्वारा उस आवेश पर छींटा डालकर उफान को शांत कर दिया जाता है। तुरत-फुरत युद्ध शुरू नहीं हो पाते। शांति की परिभाषा करते हुए युद्धशास्त्रियों ने कहा है—''शांति का मतलब है दो युद्धों के बीच होने वाली तैयारी।'' युद्ध कम हो जाने का एक कारण यह है कि युद्धोपकरण महंगे हो गए और शक्ति संतुलन इतना बराबर का हो गया है कि हर किसी को दूसरे से खतरा दिखाई देता है। परमाणु युद्ध कभी भी हो सकता था यदि शक्ति संतुलन न होता। यदि अहिंसा-प्रशिक्षण का सूत्र व्यापक बनता तो शक्ति संतुलन के नाम पर शस्त्रीकरण को बढ़ावा नहीं मिलता, शांति और सुरक्षा का दर्शन शास्त्रों में नहीं मिलता है।[15]

भारतीय दर्शन परम्परा ने अपने समृद्ध विचारों व मूल्यों से समस्त संसार का जगद्गुरु के रूप में नेतृत्व किया। जैन व बौद्ध दर्शन के प्रवर्तक रूप में महावीर स्वामी व बुद्ध ने सम्पूर्ण विश्व में शांति एवं अहिंसा को मानव धर्म का एक महत्त्वपूर्ण अंग बनाया, तो वही आधुनिक भौतिकवादी युग में गाँधी ने सम्पूर्ण विश्व को सत्य, अहिंसा व सदाचार जैसे मूल्यों की शक्ति से परिचित कराया और सिद्ध किया कि हम भारतीय आध्यात्मिक मूल्यों में समस्त संसार से कहीं आगे है। हम शांति और अहिंसा के द्वारा समस्त समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। जिसकी आज भयाक्रांत विश्व को अत्यधिक आवश्यकता है। शांति के लिए शिक्षा-अन्तरराष्ट्रीय (ई.एफ.पी. इण्टरनेशनल) तथा इसके सहयोगी संस्थाओं का गठन विश्व के सभी मानव समाजों में शांति शिक्षा कार्यक्रमों को लागू करने के लिए किया गया है। यूनेस्को तथा यूनिसेफ जैसी संस्थाएं भी अहिंसा एवं शांति शिक्षा की जोरदार ढंग से वकालत कर रही हैं। सन् 2000 को शांति संस्कृति व विश्व के बच्चों के लिए अहिंसा का अन्तरराष्ट्रीय वर्ष तथा वर्ष 2001-2010 तक के दशक को शांति, संस्कृति व विश्व के बच्चों के लिए अहिंसा का अन्तरराष्ट्रीय दशक मनाया जाना वस्तुतः यूनस्को की महान विचारधारा का सूचक हैं।[16]

सुझाव

मानवता के अस्तित्व को अक्षुण्ण रखने एवं विश्व को युद्धों की विभीषिकाओं से बचाने के लिए हम सभी को शांति शिक्षा के प्रचार-प्रसार में कटिबद्ध होकर सहयोग करना होगा एवं श्रेष्ठ गुणों को अपने जीवन का अंग बनाए और हिंसा, शोषण, सामाजिक अन्याय, द्वैष, परस्पर वैमनस्य और असहयोग आदि नकारात्मक प्रवृत्तियों से भी दूर रहना होगा। निः संदेह भारतीय संस्कृति के अनुसार शिक्षा के माध्यम से शांति एवं अहिंसा को स्थापित करने के लक्ष्य की पूर्ति सरलता से की जा सकती है। आज विद्यालय एवं महाविद्यालयों में विद्यार्थियों को ऐसी शिक्षा देने की आवश्यकता है जिससे उनमें आतंकवाद, हिंसा, विद्वैष जैसी अवांछनीय घटनाओं के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण विकसित हो तथा परस्पर सौहार्द्र, सह-अस्तित्व, सहयोग, सहिष्णुता, भाईचारा जैसे सकारात्मक गुण पल्लवित हो सकें। शांति के संदेश को हृदयंगम करके राष्ट्र के भावी नागरिक समाज में शांति बनाकर शांति दूत का कार्य बखूबी कर सकते हैं। परन्तु वर्तमान में जहां अनेक विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, सरकारी संस्थाएं तथा सामाजिक संगठन हिंसा, अलगाव, आन्दोलन, युद्ध जैसी समस्याओं के शैक्षिक अध्ययन पर अपने बहुत संसाधन को लगाते हैं। वहीं शांति शिक्षा या अहिंसा के लिए शिक्षा प्रदान करने की दिशा में तनिक भी सक्रिय नहीं है। अतः अभिभावकों, अध्यापकों, छात्रों, युवाओं तथा देश के भावी नेताओं को शांति के मूलभूत सिद्धान्तों की शिक्षा देने के लिए एक सुनियोजित तथा संधृत कार्यान्वयन योजना बनाने व क्रियान्वित करने की सख्त जरूरत है।

निष्कर्ष

भारतीय संस्कृति के अनुसार अहिंसा की अवधारणा में धार्मिक, राजनीतिक, नैतिक, आध्यात्मिक आदि सभी पक्ष समाहित हैं। शांति शिक्षा कार्यक्रमों से नये नागरिकों व नेताओं की प्रत्येक पीढ़ी में हिंसा व युद्ध में परिणित होने वाली कलह की आवृत्ति व मात्रा को कम करने के लिए आवश्यक सोच, समझदारी व कौशल विकसित करना अपेक्षित है। इससे समाज की ऊर्जा व बौद्धिक क्षमता तथा भौतिक संसाधनों का प्रयोग शांति की संधृत तथा प्रगतिशील संस्कृति के निर्माण में सम्भव हो सकेगा। इस प्रकार शांति शिक्षा का लक्ष्य शिक्षा के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व में शांति स्थापित करके युद्ध, संघर्ष व हिंसा के माहौल को समाप्त करना है। इसके लिए सह-अस्तित्व, सहिष्णुता व भाईचारे की भावना को पोषित करके अलगाववाद, आतंकवाद व सम्प्रदायवाद की कलुषित दुर्भावनाओं को समाप्त करना होगा। अनुसंधान मूलक कार्यों से निश्चय ही विश्व के देशों में अस्तित्व

में सद्भावना के अन्तर्गत अहिंसा एवं शांति शिक्षा के प्रति मानवता के लिए सकारात्मक शुभ संकेत अपेक्षित है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. *अणुव्रत*, पाक्षिक पत्रिका, वर्ष : 56, अंक : 13, 1-15 मई, 2011, अणुव्रत महासमिति, नई दिल्ली, पृ. 5
2. *शिविरा पत्रिका*, वर्ष : 10, अंक : 10 अप्रेल, 2013, माध्यमिक शिक्षा निदेशालय, राजस्थान, बीकानेर, पृ. 15
3. आचार्य महाप्रज्ञ, *मैं, मेरा मन, मेरी शांति*, आदर्श साहित्य संघ, नई दिल्ली, 2007, पृ. 38-39
4. स्वामी संवित् सोमगिरि, *कालजयी सनातन धर्म*, मानव प्रबोधन प्रन्यास, बीकानेर, 2008, पृ. 51
5. आचार्य महाप्रज्ञ, *नया मानव नया विश्व*, आदर्श साहित्य संघ, नई दिल्ली, 2008, पृ. 36
6. कृष्णाकान्त पाठक, *गांधीवाद और मार्क्सवाद*, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2010, पृ. 11
7. आचार्य महाप्रज्ञ, *इकोनोमिक्स ऑफ नॉन वायलेंस*, जैन विश्व भारती, विश्वविद्यालय, लाडनूं, 2008, पृ. 3-4
8. एस.एल. गांधी, *इकोनॉमिक्स ऑफ नॉन वायलेंस एण्ड द विजन ऑफ ए सस्टेनेबल वर्ल्ड*, जैन विश्वभारती, लाडनूं, 2008, पृ. 9-12
9. फ्रिट्नॉफ काप्रा, द *टर्निंग पॉइंट*, लेमिंगो, हार्पर कोलिंस, लंदन, अध्याय-7, 1993, पृ. 201
10. मोहनदास कर्मचन्द गांधी, *हिन्द स्वराज*, सर्व सेवा संघ, वाराणसी, 2002, पृ. 36
11. *यंग इण्डिया*, अहमदाबाद, 11 अगस्त, 1920
12. वही
13. *हरिजन पत्रिका*, पूना, अहमदाबाद, मद्रास, 12 नवम्बर, 1938, पृ. 329
14. *शिविरा पत्रिका*, मासिक, वर्ष : 52, अंक : 4, अक्टू., 2011, पृ. 14
15. आचार्य महाप्रज्ञ, *नया मानव नया विश्व*, आदर्श साहित्य संघ, लाडनूं, 2008, पृ. 45
16. एस.पी. गुप्ता, *भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं*, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2009, पृ. 574-75

डॉ. अविनाश पारीक

सह आचार्य

आई.ए.एस.ई. मानित विश्वविद्यालय, गांधी विद्या मन्दिर, सरदारशहर

❑❑❑

उच्च शिक्षा में राष्ट्रीय संस्कृति के समावेशन हेतु विषय-वस्तु

● डॉ. सरिता शर्मा

हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रो. जेरोमी ब्रुनर के अनुसार, 'Culture Shapes a Mind' अर्थात् संस्कृति मस्तिष्क को आकार प्रदान करती है।[1] इस प्रकार संस्कृति वह उपकरण है जिससे न केवल हम अपना संसार बनाते हैं अपितु अपनी शक्तियों व स्वयं से परिचित होते हैं। प्रो. ब्रुनर आगे कहते हैं कि हम मानसिक क्रियाकलापों को तब तक नहीं समझ सकते जब तक हम सांस्कृतिक परिस्थितियों व संसाधनों के परिप्रेक्ष्य में इसका अध्ययन न कर लें। अधिगम, स्मरण करना, वार्ता करना, तथा कल्पना करना आदि संस्कृति में प्रतिभागिता से ही सम्भव है।[2]

संस्कृति किसी देश के नागरिकों द्वारा शताब्दियों में किए गये कार्य का परिणाम है। किसी देश, जाति अथवा समाज के विशिष्ट पुरुषों के विचार, कार्य, वचन, आचार, व्यवहार तथा उनके द्वारा संस्थापित परम्पराएँ ही उस देश, जाति या समाज की संस्कृति का निर्माण करते हैं। इस प्रकार संस्कृति मानव-जीवन के उन समस्त तत्त्वों की समष्टि का नाम है, जिनकी धर्म और दर्शन से उत्पत्ति होकर कला-कौशल, समाज तथा व्यवहार में परिणति हो जाती है।[3]

भारतीय संस्कृति मानव को परिपूर्ण व समग्र रूप से देखती है जिसे शरीर व आत्मा दो रूपों में माना गया है शरीर (अर्थात् भौतिकवाद) व आत्मा (अर्थात् आध्यात्मवाद) का समन्वय किया गया है मानव के सर्वांगीण विकास हेतु कार्यक्रम व आव्यूह रचना की गयी है। जिससे हम अपनी अज्ञानतावश भूलते जा रहे हैं या पूर्णतः भौतिकवादी हो रहे हैं जिसके फलस्वरूप परस्पर द्वैष, असन्तोष, अन्याय, असत्य व अधर्म होता है जिससे परेशान होकर शांति, सन्तोष व सुख की तलाश में पूर्णतः वैरागी हो जाना चाहते हैं। अध्यात्म की अधूरी समझ होने के कारण ढोंगी साधु-संन्यासियों, बाबाओं आदि के दुष्चक्र में फंस जाते हैं। अतः आवश्यक है

कि शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर विशेषतः उच्च शिक्षा में भारतीय संस्कृति आधारित पाठ्यक्रम व पाठ्यवस्तु का समावेशन किया जाना चाहिए।

भारत में उच्च शिक्षा का विकास

भारत में शिक्षा-दीक्षा वैदिक युग से चलती आ रही है हमारे प्राचीन साहित्य अर्थात् वेद, ब्राह्मण और उपनिषद् आदि ने हमारे प्राचीन ऋषियों के माध्यम से मानव जाति के समक्ष उच्चतम ज्ञान प्रकट किया।

गुप्त काल में नालन्दा की स्थापना के साथ ही भारत विश्व में उच्च शिक्षा का केन्द्र बन गया, जहाँ सभी ज्ञान की शाखाओं पर विशेषीकरण था, इसी प्रकार तक्षशिला, जहाँ मुख्यतः चिकित्सा का अध्ययन किया जाता था, उज्जैन खगोल विज्ञान का केन्द्र था। बौद्ध धर्म या बौद्धकाल में सारनाथ विश्वविद्यालय, अजंता की स्थापना हुई। अजन्ता सीखने की कला, वास्तुकला व चित्रकला हेतु प्रसिद्ध हुआ। शिक्षा के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ विश्वविद्यालय स्थापित होने के साथ ही भारतीय समाज में भी सुधार हुआ फलतः अर्थव्यवस्था भी सुदृढ़ हुई, शिक्षा प्रणाली के माध्यम से भारत का इस काल में दुनिया पर भी प्रभुत्व रहा। मुगल काल में फतेहपुर सीकरी, आगरा, दिल्ली और अन्य स्थानों पर महाविद्यालय स्थापित हुए। साथ ही हिन्दू दर्शन पर आधारित शिक्षा प्रणाली भी मौजूद रही।

उच्च शिक्षा की परम्परागत प्रणाली में मुख्य परिवर्तन यूरोपीय शासकों द्वारा 1600 ई. से प्रारम्भ हुआ। 1850 के अन्त में भारत में अनौपचारिक यूरोपीयन शैली की संस्थाएं स्थापित हुईं जिसका मुख्य उद्देश्य यूरोप की भाषा बोलने में दक्ष प्रशासक व क्लर्क या नौकर तैयार करना था। वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था ब्रिटिश काल की ही देन है। ब्रिटिश शैली के विश्वविद्यालय का गठन कलकत्ता, बोम्बे और मद्रास में 1857 में लंदन विश्वविद्यालय के मॉडल के आधार पर किया गया था। यही से भारत में आधुनिक उच्च शिक्षा प्रणाली की नींव पड़ी। 1850 ई. के अन्तिम भाग में यूरोप व अमेरिका में आधुनिक विज्ञान, इंजीनियरिंग शिक्षा आदि विकसित हुई। इसी की तर्ज पर भारत में पहला उच्च तकनीकी शिक्षा केन्द्र 1903 में भारतीय विज्ञान संस्थान, टाटा की स्थापना हुई। आज भारत आबादी के आधार पर विश्व का दूसरा व उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विद्यार्थियों के नामांकन के आधार पर तीसरा सबसे बड़ा देश है।

उच्च शिक्षा विभाग के तहत मानव संसाधन विकास मंत्रालय के माध्यम से भारत सरकार शिक्षा नीतियों का निर्माण करती है। तथा एक संवैधानिक निकाय विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) (जिसकी स्थापना 1956 में हुई) के माध्यम से उच्च शिक्षा के समन्वय, मूल्यांकन और मानकों को बनाए रखने का

कार्य करता है। UGC ने विभिन्न क्षेत्रों में बढावा देने, अनुदान, मानक निर्धारण और व्यावसायिक शिक्षा हेतु वैधानिक परिषदों की स्थापना की है। 2006 में सिंगापुर, चीन, जापान व भारत आदि देशों ने नालन्दा अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय को पुनः स्थापित करने की प्रस्तावित योजना की घोषणा की है।

भारत में उच्च शिक्षा तन्त्र 18-23 वर्ष की आयु वर्ग के कुल जनसंख्या के 70 प्रतिशत को सेवाएं प्रदान करता है।

उच्च शिक्षा की संरचना

संस्कृति आधारित पाठ्यक्रम अर्थात् अनुदेशन व विद्यार्थी के अधिगम को संस्कृति के आधार (यथा-मूल्य, मानक ज्ञान, विश्वास, आस्था, अनुभव व भाषा) पर आधारित कर प्रदान करना है।

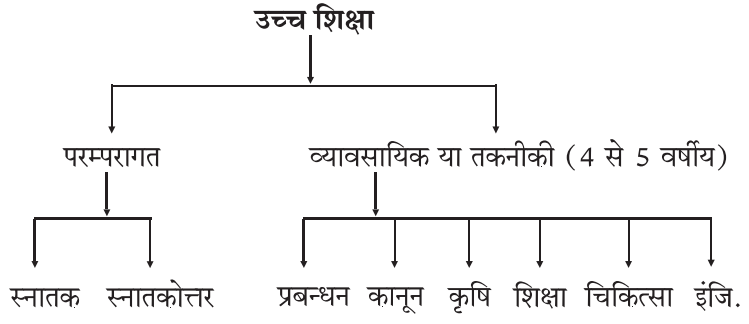

संस्कृति के तत्त्व

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से संस्कृति के तीन प्रकार हैं—

1. **सार्वभौमिक**—जो सर्वमान्य हो, सभी को आपस में बांधती हो, शान्ति व सतत् विकास को बढ़ावा दें। यह समाज के मानक होते हैं, जैसे भाषा। ये पाठ्यक्रम में आधारभूत विषय के रूप में शामिल होने चाहिए।
2. **विशेषीकरण**—जिसमें समाज के सदस्य अपनी जीविकोपार्जन हेतु व समाज के विकास में योगदान देने में ठीक प्रकार से प्रशिक्षित हों। इसमें सदस्य पेशे या व्यवसाय के ज्ञान, कौशल तथा नैतिकता के साथ तैयार किए जाते हैं और उन्हें पेशे या व्यवसाय के अभ्यास में प्रदर्शित करते हैं। उदाहरणार्थ—शिक्षक, वकील, डॉक्टर, किसान, आदि, संस्कृति की विशेषताएं जितनी अधिक होगी श्रम का विभाजन उतना अधिक होगा। फलतः सतत् विकास होगा। यह पाठ्यक्रम में विशेषीकरण विषयों के रूप में शामिल होने चाहिएं।

3. **संस्कृति के विकल्प**—संस्कृति विकल्प चीजों को करने के अलग-अलग तरीके हैं, जो कि समाज द्वारा स्वीकार्य हो, समाज में व्यक्तिगत प्रतिभागों का सम्मान होता है परन्तु नवाचार समाज की नैतिकता व धार्मिक मापदण्डों के दायरे में ही स्वीकार होते हैं। समाज के प्रतिभावान सदस्यों के विशिष्ट कौशलों को प्रशिक्षित करने हेतु विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है जैसे—धर्मवक्ता, कलाकार, दार्शनिक तथा वैज्ञानिक आदि शिक्षा के कार्यक्रम इस प्रकार होने चाहिए ताकि ना केवल इन विशिष्टताओं की पहचान हो सके बल्कि इन्हें पल्वित करने का प्रयास हो। यह पाठ्यक्रम में सहायक वैकल्पिक पाठ्यक्रम के रूप में शामिल होने चाहिए।

संस्कृति आधारित शिक्षा के पांच आधारभूत तत्त्व है, जो इस प्रकार है—

1. भाषा।
2. परिवार व समुदायः—पाठ्यक्रम विकास हेतु परिवार व समुदाय में सक्रिय भागीदारी।
3. प्रसंग—विद्यालयों, महाविद्यालयों व कक्षा-कक्षों को सांस्कृतिक ढंग से संरचित करना।
4. पाठ्यवस्तु—संस्कृति आधारित पाठ्यवस्तु व मूल्यांकन द्वारा अधिगम को सार्थक व प्रासंगिक बनाना।
5. दत्त एवं जवाबदेही—विभिन्न तरीकों से दत्त संकलन व निर्वचन द्वारा संस्कृति दायित्त्व हेतु विद्यार्थियों की प्रगति सुनिश्चितता।

शोध अध्ययनों से यह सिद्ध हो चुका है कि संस्कृति आधारित शिक्षा, अधिगम व व्यक्तित्व स्तर पर सकारात्मक प्रभाव डालती है। जैसा कि ब्रेन्डोन लेडवर्ड, ब्रेन्न ताकायामा और क्रिस्टन ने (मई 2009) हवाईयन संस्कृति पर आधारित शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि अधिगम सम्प्राप्तियाँ, सामाजिक व भावात्मक विकास पर संस्कृति आधारित शिक्षा का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।[4]

पेट्रोनल, सैविन ने संस्कृति आधारित पाठ्यक्रम : सांस्कृतिक विरासत एवं यूरोपियन पहचान विषय पर शोध किया। ग्रेस चिविको ओफोरमा ने पाठ्यक्रम नियोजन में संस्कृति के घटकों का समावेशन विषय पर शोधकार्य किया और निष्कर्ष के रूप में पाया कि संस्कृति पर आधारित पाठ्यक्रम द्वारा मानव का सर्वांगीण विकास हेतु ज्ञान, कौशल, मूल्यों व अभिवृति के रूप में अधिगम अनुभवों को संकलित कर अधिगमकर्त्ता में अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन कर उन्हें सक्रिय सामाजिक सदस्य

के रूप में परिणित कर सकते हैं, एक सुनियोजित क्रियात्मक पाठ्यक्रम लोक संस्कृति को परावर्तित करना चाहिए। प्रत्येक पाठ्यक्रम सार्वभौमिक, सांस्कृतिक विशिष्टताएं व विशेषीकरण आदि पर आधारित होना चाहिए।

इसी प्रकार लिपका जे. (2002) ने स्वयं निर्धारण हेतु 'स्वदेशी भाषा व संस्कृति का स्कूल पर प्रभाव' विषय पर अध्ययन किया।[5] शोधकर्त्ता ने पाया कि स्वदेशी संस्कृति व भाषा का पाठ्यक्रम में विलोपीकरण के साथ स्थानीय देहाती विद्यार्थियों का विद्यालयी पलायन अधिक होता है।

इसी प्रकार एम.सी. एल्पाइन ने पाया कि कक्षा-कक्ष व घर की संस्कृति में अन्तर होने पर विद्यार्थी का कक्षा में सक्रिय सहभागिता के साथ स्वयं की सांस्कृतिक परम्परा के प्रति मान्यता भी अवरूद्ध होती है।[6]

उक्त अनुसंधानों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यदि कोई राष्ट्र सही अर्थो में सम्पन्न, स्वाभिमानी व आत्मनिर्भर होना चाहता है तो उसे अपनी जड़ों को मजबूत करना होगा। अपने नागरिकों उनकी अकाँक्षाओं, प्रवृत्तियों, आचार-व्यवहार अर्थात् संस्कृति के अनुसार ही अपनी शिक्षा-दीक्षा, नीतियाँ व भावी विकास की योजनाएं बनाकर उनका क्रियान्वयन करना होगा, हिरोशिमा-नागासाकी (1945) के बम विस्फोट के पश्चात् भी जापान आज अग्रिम देशों में है, क्यों? क्योंकि उसने अपनी राष्ट्रीय संस्कृति को शिक्षा के माध्यम से बनाये रखा, हम राजनैतिक रूप से स्वतन्त्र हुए हैं परन्तु मानसिकता से आज भी विदेशी व गुलाम हैं, इसका प्रमाण विदेशी भाषा, हमारी शिक्षा प्रणाली की विषयवस्तु आज भी पाश्चात्य है।

प्रस्तुत शोध-पत्र में भारतीय संस्कृति आधारित उच्च शिक्षा को पाठ्यक्रम की रूपरेखा प्रदान करने का बहुत ही प्रारम्भिक प्रयास किया गया है इस पर आगामी शोधपरक प्रस्ताव बनाने की आवश्यकता है।

उच्च शिक्षा के लक्ष्य

उच्च शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर मुख्य लक्ष्य मानव का पशुचेतना से मानवीय चेतना में रूपान्तरण होना चाहिए। इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण होना चाहिए।

उच्च शिक्षा के उद्देश्य

1. अस्तित्व के ज्ञान के साथ सह-अस्तित्व की समझ विकसित करना।
2. मानव को शरीर व जीवन दो स्तरों पर समझाते हुए मानवीयतापूर्ण आचरण सीखना।

3. मानव को समाधानिक बनाते हुए परिवार में समृद्धि, समाज में अभय व विश्व में सह-अस्तित्व स्थापित करना।
4. मानवीयता की अक्षुण्णता हेतु मानवीय संस्कृति, सभ्यता तथा उसकी स्थापना एवं संरक्षण हेतु विधि व व्यवस्था का अध्ययनपूर्वक प्रमाणित कराना है इससे मनुष्य के चारों आयामों (व्यवसाय, व्यवहार, विचार एवं अनुभूति) तथा पांचों स्थितियों (व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र एवं अन्तर्राष्ट्रीय) में एक सूत्रता, तारतम्यता एवं अनन्यता प्रत्यक्ष हो सके। फलस्वरूप समाधानात्मक भौतिकवाद, व्यवहारात्मक जनवाद एवं अनुभवात्मक अध्यात्मवाद मनुष्य जीवन में चरितार्थ एंव सर्वसुलभ हो सके। इससे प्रत्येक मनुष्य की प्रत्येक स्थिति में बौद्धिक समाधान एवं भौतिक समृद्धि हो सकेगी।
5. समस्त प्रकार की वर्ग भावनाओं को मानवीय चेतना में परिवर्तन करना।
6. प्रत्येक मनुष्य जीवन में अनिवार्यता एवं आवश्यकता के रूप में पाये जाने वाले बौद्धिक समाधान एवं भौतिक समृद्धि की समन्वयता को स्थापित करना।
7. शिक्षा प्रणाली, पद्धति एवं व्यवस्था की एक सूत्रता को मानवीयता की सीमा में स्थापित करना।
8. विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, एवं शिक्षा मंदिरों की गुणात्मक एकता एवं एक-सूत्रता को स्थापित करना।
9. उन्नत मनोविज्ञान के संदर्भ में निरन्तर शोध एवं अनुसंधान व्यवस्था को प्रस्थापित करना।
10. प्रत्येक विद्यार्थी और व्यक्ति को अखण्ड समाज के भागीदार के रूप में प्रतिष्ठित करना।
11. शिक्षक, शिक्षार्थी एवं अभिभावक की तारतम्यता को व्यवहार शिक्षा के आधार पर स्थापित करना।
12. विगत वर्तमान एवं आगत पीढ़ी की परम्परा के प्रत्येक स्तर में तारतम्यता, एकसूत्रता, सौजन्यता, सहकारिता, दायित्त्व तथा कर्त्तव्यपालन योग्य क्षमता का निर्माण करना।
13. मानवीय संस्कृति, सभ्यता, विधि एवं व्यवस्था सम्बन्धी शिक्षा को सर्वसुलभ बनाना।
14. प्रत्येक मनुष्य में अधिक उत्पादन एवं कम उपयोग योग्य क्षमता को प्रतिस्थापित करना।

15. व्यक्तित्व व प्रतिभा सम्पन्न स्थानीय व्यक्तियों के सम्पर्क में शिक्षार्थी एवं शिक्षकों को लाने की व्यवस्था प्रदान करना।

विषयवस्तु

भारतीय संस्कृति पर आधारित पाठ्यवस्तु का विभिन्न स्तरों पर (स्नातक स्तर व स्नातकोत्तर) पर दो तरह से समावेशन किया जा सकता है। 1. अन्तः अनुशासनात्मक 2. अन्तर्रानुशासनात्मक अर्थात् एक स्वतन्त्र कोर्स के रूप में। अन्तः अनुशासनात्मक रूप से भारतीय संस्कृति का विभिन्न पाठ्यक्रमों में समावेशन इस प्रकार किया जा सकता है—

- मानवीय सम्बन्धों व मूल्यों का ज्ञान व उनकी पहचान, दायित्वों व कर्त्तव्यों का बोध प्रत्येक संकाय के पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए।
- संघर्षात्मक एवं द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के स्थान पर समाधानात्मक भौतिकवाद।
- विज्ञान विवेक सम्मत (विवेक अर्थात् प्रयोजन की पहचान)।
- भौतिकता अर्थात् भौतिकवाद के स्थान पर समाधानात्मक भौतिकवाद (अस्तित्व में जो भी पदार्थ हैं भौतिक व रसायनिक रूप में हैं ये मानव को व्यवस्था में जीने के लिए प्रेरित करते हैं और समग्र इकाईयां एक दूसरे के लिए पूरक हैं तथा विकास हेतु परस्पर अन्तर्सम्बन्धित हैं।
- विज्ञान के साथ चैतन्य का अध्ययन, चैतन्य अर्थात् जीवन पक्ष, रासायनिक भौतिक विरचना का अध्ययन, मानव की रचना विरचना की पूरकता।
- अध्यात्मवाद, अनुभवात्मक अध्यात्मवाद होना चाहिए।
- लाभोन्मादी अर्थशास्त्र के स्थान पर आवर्तनशील अर्थशास्त्र, सुरक्षा व संसाधनों का सही उपयोग का अध्ययन।
- समाजशास्त्र-व्यवहारवादी समाजशास्त्र होना चाहिए जो द्वन्द्व पर आधारित ना होकर न्यायपूर्वक व्यवहार पर आधारित हो।
- मनोविज्ञान-मानव संचेतनावाद मनोविज्ञान (संचेतना का आधार जीवन है शरीर संचेतना को व्यक्त करने का माध्यम है।) मनोविज्ञान के साथ मानवीय मूल्यों की शिक्षा, इन्द्रियमूलक संवेदनशीलता के स्थान पर जीवनमूलक संवेदनशीलता।
- चिकित्सा शास्त्र के साथ आयुर्वेद के मुख्य सिद्धान्तों को शामिल किया जाना चाहिए।
- कानूनी शिक्षा के साथ धर्म, सत्य व व्यवस्था का स्वरूप पढ़ाया जाना चाहिए।

- स्वावलंबन आधारित तकनीकी शिक्षा प्रत्येक उच्च अध्ययन के विद्यार्थी को दी जानी चाहिए।
- तकनीकी शिक्षा के साथ मानवीय संचेतना का अध्ययन, उत्पादन एवं निर्माण शक्ति की विपुलता के लिए निपुणता एवं कुशलता को पूर्णतया प्रशिक्षित कराने के लिए समृद्ध प्रणाली, व्यवस्था एवं अध्ययन होना चाहिए, जिससे मनुष्य की सामान्य आकांक्षा एवं महत्त्वाकांक्षा से संबन्धित वस्तुओं का निर्माण सुगमतापूर्वक हो सके। तकनीकी शिक्षण के साथ सामाजिकता तथा व्यक्ति में निष्ठा को व्यावहारिक रूप देने की व्यवस्था होनी चाहिए। प्रत्येक विद्यार्थी को उत्पादन क्षमता में निपूर्ण बनाया जाना चाहिए, जिससे अधिक उत्पादन एवं कम उपभोग सम्पन्न हो सके। तकनीकी अध्ययन के साथ व्यावहारिक अध्ययन अनिवार्य रूप से हो, जिससे प्रत्येक व्यक्ति उद्यमशील एवं सामाजिक सिद्ध हो सके।
- प्रत्येक विषय के साथ प्रत्येक स्तर पर देव व दिव्य चेतना को पढ़ाया जाना चाहिए।
- यथार्थ साहित्य, दर्शन के साथ अनुभव को, समाजशास्त्र के साथ मानवीय संस्कृति व सभ्यता, भूगोल व इतिहास के साथ-साथ मानवता को पढ़ाया जाना चाहिए।

एक स्वतंत्र अनुशासन के रूप में भारतीय संस्कृति आधारित विषय-वस्तु, जिसका शीर्षक 'चेतना विकास मूल्य शिक्षा' रखा जा सकता है, औपचारिक उच्च स्तर की शिक्षा के प्रत्येक स्तर (स्नातक व स्नातकोत्तर) पर पढ़ाया जा सकता है जिसकी विषय-वस्तु इस प्रकार है—

अध्ययन की विषय-वस्तु

- सम्पूर्ण सह-अस्तित्व रूपी अस्तित्व (अस्तित्व, सहज है सह-अस्तित्व, सह-अस्तित्व सहज है विकास, विकास सहज है जीवन, जीवन सहज है जागृति, सह-अस्तित्व दृश्य है) रासायनिक भौतिक रचना-विरचनाएं इस ढंग से यह सब एक दूसरे से अंतः संबंधित क्रम है ये सारी घटनाएं नित्य वर्तमान हैं।
- सुखी होने के चार चरण हैं—समाधान, समृद्धि, अभय एवं सह-अस्तित्व में जीना इसकी अभिव्यक्ति व्यक्ति, परिवार में, समाज में, प्रकृति में होती है।
- मानव का मानव के साथ न्यायपूर्वक प्रकृति के साथ नियमपूर्वक, संतुलित रूप से जीना न्याय का सम्प्रत्यय (न्याय से तात्पर्य संबंध, मूल्य, मूल्यांकन

एवं उभरतृप्ति ही है।) धर्म-अनुभव प्रमाण बोध, जो बुद्धि में होता है अर्थात् समाधान, समाधान अर्थात् मानव धर्म।

- नैतिकता की शिक्षा (नैतिकता, तन, मन, धन रूपी अर्थ के प्रयोजन में नियोजित करना है इसे ही सदुपयोग कहते है। सदुपयोग दो अर्थ में (1) सेवा व उत्पादन में (2) संबंधों के साथ प्रयोजन को सफल बनाने हेतु।
- मानव-शरीर व जीवन, इसकी शारीरिक व जीवन (आत्मिक) आवश्यकताएं, इसे समझना व समझाना।
- जीवन का लक्ष्य—सुख, शांति, संतोष और आनन्द।

  मानव का लक्ष्य—समाधान, समृद्धि, अभय, सह-अस्तित्व।

  समाधान—सुख (जब हम द्वन्द्व से मुक्त समाधानिक होते हैं, तो सुखी होते हैं)।
- मानवीय सम्बन्धों की पहचान व मूल्यों को समझकर उनका निर्वहन करना।
- व्यवस्थित होना व समग्र व्यवस्था में भागीदारी करना, सत्य की पहचान, भ्रम से मुक्ति (स्वयं को समझना (शरीर-जीवन) स्तर के लिए न्याय, धर्म, सत्य समझना आवश्यक है, संबंध के आधार पर न्याय समझ में आता है, धर्म-व्यवस्था से सत्य-अस्तित्व से समझ में आता है व अस्तित्व सह-अस्तित्व से समझ में आता है।)
- व्यवस्था का स्वरूप—(1) शिक्षा संस्कार में भागीदारी (2) न्याय-सुरक्षा में भागीदारी (3) उत्पादन-कार्य में भागीदारी (4) विनिमय-कोष में भागीदारी (5) स्वास्थ्य-संयम से भागीदारी (6) आयोगों में भागीदारी ही व्यवस्था में भागीदारी है।

अनुसंधान के क्षेत्र में

संस्कृति आधारित शिक्षा के प्रति समझ व इसकी स्थापना हेतु अनुसंधान कार्यों की आवश्यकता है। संस्कृति उपागम पर शोध हेतु कुछ शोध प्रश्न प्रस्तुत हैं—

1. नवाचार आधारित विद्यालय वातावरण निर्माण हेतु भावी प्रारूप आकल्प (मॉडल डिजाईन) हेतु परम्परागत संस्कृति आधारित शैक्षिक व्यूह-रचना से हम क्या सीख सकते हैं?
2. स्वदेशी विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पति, अधिगम सम्प्राप्तियों व संस्कृति आधारित पाठ्यक्रम में क्या सम्बन्ध है?
3. संस्कृति आधारित पाठ्यक्रम, व्यूह-रचना व शैक्षिक निष्पति में सम्बन्ध

हेतु जिम्मेदार कारक क्या है? जैसे समुदाय सम्बद्धता, सांस्कृतिक पहचान।

4. किन परिस्थितियों में संस्कृति आधारित शिक्षा सर्वाधिक सफल हो सकती है? (भाषा, प्रोटोकॉल, मूल्य, कला तथा ज्ञान आदि)।
5. सम्पूर्ण विश्व में देशी संस्कृति की उत्तर-जीविता पर संस्कृति आधारित पाठ्यक्रम के क्या प्रभाव है? मानवीय विविधता तथा पर्यावरण संतुलन पर आदि।

क्रियान्वयन की योजना तीन रूपों में हो सकती है—

जीवन विद्या योजना	शिक्षा का मानवीकरण	परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था
इस योजना का केन्द्र बिन्दु जीवन है जो सभी में समान मानव की समानता का आधार जीवन है। शरीर कभी भी दो व्यक्तियों के समान नहीं होते। जीवन समान-जीवन की शक्तियाँ व बल समान है जीवन का लक्ष्य समान है, जागृति ही इसका लक्ष्य है। समाधान, समृद्धि, अभय न्याय, धर्म, सत्य	शिक्षा की विषयवस्तु मानव में सही समझ विकसित करने वाली हो।	शक्ति केन्द्रित शासन व्यवस्था के स्थान पर समाधान केन्द्रित व्यवस्था स्थापित करे।

सन्दर्भ

1. किरण टण्डन, *भारतीय संस्कृति*, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली, 1994
2. ए. नागराज, *मध्यस्थ दर्शन (सह-अस्तित्ववाद)*, जीवन विद्या प्रकाशन, भजनाश्रम, नर्मदांचल अमरकंटक (म.प्र.), 2010

3. ए. नागराज, *जीवन विद्या एक परिचय*, श्री भजनाश्रम, श्री नर्मदांचल, अमरकंटक, शहडोल (म.प्र.), 2004
4. ए. नागराज, *जीवन विद्या अध्ययन बिन्दु व विकल्प*, श्री भजनाश्रम, श्री नर्मदांचल, अमरकंटक, शहडोल (म.प्र.), 2010
5. *ऐरिक डाइजेस्ट*, वाशिंगटन, डीसी : ऑफिस ऑफ एज्यूकेशनल रिसर्च एण्ड इम्प्रूवमेंट
6. एम. क्रागो, द *इन्डक्शन ईयर एक्सपीरियेंस इन क्रॉस-कल्चरल सेटिंग : टीचिंग एण्ड टीचर एज्यूकेशन*, 11 (4), 1995, 403-1
7. कल्चर बेस्ड करिकुलम : कल्चरल हेरीटेज एण्ड यूरोपियन आइडेन्टीटी - सीएचईआई, *जर्नल ऑफ इनोवेशन इन साईक्लोजी, एज्यूकेशन एण्ड डिडेक्टिक्स*, वोल्यूम 20, नं. 1, 2016 पेज. 63-72.

डॉ. सरिता शर्मा
रीडर
बुनियादी शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय, (सी.टी.ई)
गांधी विद्या मंदिर
सरदारशहर, चूरू (राजस्थान)

❑❑❑

शैक्षिक प्रक्रिया में निर्देशन एवं परामर्श

● डॉ. महेश कुमार शर्मा

शिक्षा द्वारा बालक का सर्वांगीण विकास किया जाता है। बालक के विकास के लिए उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है अर्थात शैक्षिक उद्देश्य प्राप्ति में शैक्षिक प्रक्रिया द्वारा प्रेम व स्नेह पूर्ण परिस्थितियों मे ज्ञान का स्थानान्तरण किया जाता है। बालक में ज्ञान स्थानान्तरण के लिए शैक्षिक प्रक्रियाओं में अधोलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु परिस्थितियां प्रदान की जाती हैं।''[1]

1. सद्-आचरण।
2. अन्तर्निहित प्रतिभा प्रस्फुटन।

उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति में माता-पिता द्वारा समझदारी युक्त पालन पोषण, शिशु पाठशालाओं में कुशल निर्देशन के साथ-साथ स्वतंत्र अन्तः क्रियाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती हैं। शिक्षा के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु अधोलिखित बिन्दुओं का अत्यधिक महत्त्व है।

1. प्रेमयुक्त शैक्षिक प्रक्रिया।
2. समझदारी पूर्ण बच्चों का पालन-पोषण।
3. कुशल निर्देशन।

मेरे द्वारा यहां पर निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्त्व को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है।

वर्तमान समय में बच्चें अनेक उपलब्धियों से परिपूर्ण हैं, परन्तु आए दिन शिक्षण संस्थाओं में अनेक घटनाएं घटित होती हैं, जो यह स्पष्ट करती हैं कि बच्चों में निषेधात्मक प्रवृतियां पनप रही हैं। उक्त स्थितियां हमारे समक्ष प्रश्न कर रहीं हैं, जो कि अधोलिखित हैं—

1. क्या शिक्षण प्रक्रिया में अपेक्षित कुशल निर्देशन, परिपक्व मार्गदर्शन एवं ज्ञान का स्थानान्तरण हो रहा है?
2. क्या ज्ञान स्थानान्तरण की प्रक्रिया में प्रेम व स्नेह हैं?

3. क्या शिक्षा केवल धनोपार्जन साधन मात्र नहीं है?
4. क्या शिक्षण प्रक्रिया मानवीय संवेदना जाग्रत करने, मानवीय मूल्यों की प्रोन्नति में सहायक नहीं हैं?
5. क्या शिक्षा स्वस्थ एवं मानसिक विकास कल्याण बोध का भाव उत्पन्न करती है?

उपर्युक्त बोध प्रश्नों का उत्तर नहीं में मनन व चिन्तन के फलस्वरूप स्पष्ट हो रहा है कि शैक्षिक प्रक्रिया में निश्चित ही ऐसा मानना उचित है। ऐसे में शिक्षाविद् विचार करें एवं चिन्तकों को गम्भीर चिन्तन करने की आवश्यकता है।''[2]

शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने के लिए समय-समय पर भारत में अनेक आयोगों का गठन हुआ है। इनके द्वारा शैक्षिक परामर्श एवं निर्देशन को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया।

1. मुदालियर आयोग, 1952-53, निर्देशन केन्द्र
2. कोठारी आयोग 1964-65, प्रत्येक विद्यालय में निर्देशन और सेवाएं
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986
4. कार्य योजना 1992
5. राज्य पाठ्यचर्या विद्यालय शिक्षा, 2000
6. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या, 2005

अनेक शिक्षा आयोगों के गठन समय-समय पर किये गये हैं। इन्होंने क्रमशः निर्देशन एवं परामर्श के संबंध में अपेक्षाएं प्रदर्शित की थीं। सर्वप्रथम, मुदालियर शिक्षा आयोग (1952-53) में स्थापित किया गया। इन्होंने निर्देशन केन्द्रों के गठन की सिफारिश की थी। कोठारी आयोग (1964-66) ने विद्यालय स्तर पर प्रत्येक अध्येता के निर्देशन को महत्त्वपूर्ण माना था। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के प्रोग्राम ऑफ एक्शन (1992) की सिफारिशों के अनुसार निर्देशन सेवाओं का व्यावसायिक शिक्षा, बालिकाओं की शिक्षा, इसकी व्यावसायिक शिक्षा, प्रावधिक एवं शैक्षिक प्रबंधन के विकास के साथ जोड़ने की आवश्यकता महसूस की थी। विद्यालयी शिक्षा के लिए राज्य पाठ्यचर्या (2000) व राष्ट्रीय पाठ्यचर्या (2005) में शैक्षिक निर्देशन द्वारा अध्येता की व्यावसाय चयन, मानसिक स्वास्थ्य रक्षा, विद्यालय में आनन्द की अनुभूतियों की उपलब्धि एवं अध्येता सर्वांगीण विकास हेतु महत्त्वपूर्ण माना गया।''[3] अतः इस आधार पर शैक्षिक परामर्श एवं निर्देशन के मुख्य उद्देश्य अधोलिखित हैं —

1. अध्येता का सर्वांगीण विकास।
2. अध्येता की अधिगम स्मृति में प्रोन्नति।
3. अध्येता की शैक्षिक उपलब्धि में प्रोन्नति।
4. अध्येता की समायोजन प्रक्रिया को सहर्ष निर्मित करने में सहयोग।
5. अध्येता की अधिगम अध्ययन के प्रति विधेयात्मक अभिवृति में प्रोन्नति।
6. अध्येता की स्वयं और अन्य व्यक्तियों एवं कार्य के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति व स्वस्थ दृष्टिकोण में प्रोन्नति।

उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्राथमिक से महाविद्यालयी शिक्षा तक प्रत्येक अध्येता को निरन्तर परामर्श एवं निर्देशन की आवश्यकता है। शिक्षा के स्तर के अनुरूप अपेक्षित परामर्श व निर्देशन की आवश्यकता भी परिवर्तन स्तर के अनुरूप है। अतः प्रत्येक स्तर पर परामर्श एवं निर्देशन कार्यों की आवश्यकता पृथक-पृथक अधोलिखित होगी।

1. प्राथमिक विद्यालय

प्राथमिक विद्यालय में प्रवेश लेने वाले अध्येताओं को सर्वाधिक निर्देशन और परामर्श की आवश्यकता है। ये अपने घर से विद्यालय के नवीन वातावरण में प्रवेश करते हैं। बच्चे घर में स्वतंत्र होते हैं, जबकि विद्यालय में इनका पर्यावरण नियंत्रित होता है। यहां पर इनकी स्वतंत्रता का परिसीमन हो जाता है।

उक्त स्थिति में अध्यापकों को स्वयं परिस्थिति अनुकूल मार्गदर्शन एवं निर्देशन प्रदान करने की आवश्यकता है। अध्यापक को चाहिये कि सेवा पूर्व व सेवारत प्रशिक्षण के आधार पर खेल विद्या, समूह अधिगम के माध्यम से अपेक्षित निर्देशन प्रदान करना चाहिए। उचित निर्देशन के अभाव में अध्येताओं का असमायोजन होता है। इसके प्रभाव से ही बच्चे के भावी जीवन में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होते हैं। अध्येयताओं के असमायोजन के परिणामस्वरूप मानसिक विक्षोभ, निषेधात्मक कार्य मनोवृति परिलक्षित होती है। इन्हीं कारणों से उनकी शैक्षिक उपलब्धि व व्यक्तित्व समायोजन के लिए विपरीत पर्यावरण की संरचना हो जाती है। अध्यापक से अपेक्षा की जाती है कि बच्चों को विभिन्न प्रकार के कौशल यथा मिट्टी के खिलोनों, गुड़िया बनाना, कागज के फूल, माला बनाना, कठपुतली निर्माण करवाना आदि से उनमें व्यावसायिक रुचि उत्पन्न की जाये। ये अध्येता को शिक्षा प्राप्ति के उद्देश्यों से लक्ष्य निर्धारण व रुचि उत्पन्न करने में आलम्बन प्रदान करती हैं।''[4]

इस स्तर पर अध्यापक का कार्य महत्त्वपूर्ण होता है। अध्यापक बच्चे का परामर्शदाता एवं सहयोगी होता है। प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य बच्चों के आधारभूत कौशल निर्मित करने के साथ साथ मूलभूत विषयों यथा भाषा, परिवेश एवं गणितय संज्ञान का आधार निर्मित करना है। अध्यापक शिक्षण प्रक्रिया में अधिकाधिक अध्येता के सम्पर्क में रहता है अर्थात अध्यापक अध्येता अन्तः क्रिया की शिक्षण प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। अतः अध्यापक को प्रत्येक अध्येता की व्यक्तिगत विशेषता की पहचान करनी चाहिए यथाह्व डरपोक, एकांकी, अन्तर्मुखी तथा झगड़ालू आदि। अध्यापक-अभिभावक बैठक में आपसी विचार मंथन कर बच्चे के अपेक्षित गुणों को विकसित करने एवं अपेक्षा विवादित स्थितियों को परिमार्जित करने के लिए कार्य योजना निर्मित कर संयुक्त सहभागिता बच्चे के विकास हेतु करनी चाहिए।

यहाँ यह स्पष्ट है कि प्राथमिक स्तर पर निर्देशन एवं परामर्श कार्य विद्यालयों में प्रभावशाली होना चाहिए। इस कार्य में अपेक्षित अभिभावकों का सहयोग अत्यावश्यक होना चाहिए। प्रार्थना सभा, बाल सभा एवं शिक्षण प्रक्रिया द्वारा भी परिस्थितियां उत्पन्न कर अध्यापक को अपरोक्ष रूप से बच्चों को परामर्श एवं निर्देशन प्रदान करना चाहिए।

2. उच्च प्राथमिक स्तर

शिक्षा प्रदान करने वाली ये संस्थाएं प्राथमिक व माध्यमिक स्तर की शिक्षा मध्यस्थता करने वाली है। इस स्तर पर अध्ययन करने वाले अध्येता पूर्व किशोर अवस्था अर्थात व्यःसन्धि एवं किशोर अवस्था के होते हैं। उक्त अवस्था के अध्येताओं की व्यक्तिगत समस्याएं अधिक होती हैं। इन समस्याओं का समाधान अध्येता स्वयं के स्तर करने में असक्षम होता है। अतः शिक्षक को व्यक्तिगत निर्देशन एवं परामर्श प्रदान करना चाहिए। विभिन्न संगठन के विद्यालयों के अध्येताओं, परिवार में बच्चों के अवलोकन से स्पष्ट है कि अधोलिखित स्तर पर अध्येताओं को परामर्श एवं निर्देशन की अपेक्षाएं होती हैं''[5] अर्थात् निर्देशन व परामर्श के प्रयोजन निम्न लिखित हैं—

(अ) अध्येताओं को अपने विचारों, अभिरुचियों एवं संवेदनाओं को उत्सर्जित करने के अवसर प्रदान करना।

(ब) अध्येताओं की आयुवय से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होती हैं। अतएव, अध्यापक को भावनात्मक नियंत्रण रखते हुए समस्त स्थिति को बुद्धिमतापूर्ण समझकर कार्य करना चाहिए। अध्यापक

को ऐसे अवसर विद्यालय में अध्येता को प्रदान करना चाहिए जिससे नेतृत्व, सहयोग एवं अनुशासन को सीख सकें।

(स) अध्यापक अध्येता को ऐसी परिस्थितियों में स्वनैतृत्व प्रदत करें जिससे वे अतिसक्रिय, व्यग्र या सृजनात्मक हो जाये। अध्येता स्वहित व समूह लाभ के लिए अभिप्रेरित होकर कार्य करें।

(द) अध्यापक अध्येता को योग्यतानुरूप, अभिरुचि केन्द्रित व्यवसाय अवधारणा विकसित करने में सहायता प्रदान करें।

3. माध्यमिक स्तर

माध्यमिक स्तर पर अध्ययन करने वाले अध्येता किशोरावस्था में प्रविष्ठ होते हैं। यह अवस्था अध्येता के भावी जीवन की आधार शिला है।''[6] अध्येता की इस आयु में विचारों का निरन्तर उथल-पुथल होता रहता है। अतः इस स्तर पर अध्येताओं की रूचियों का ध्यान रखते हुए व्यक्तिगत निर्देशन एवं परामर्श की आवश्यकता है। उक्त अवस्था के लिए शिक्षाविदों, मनोवैज्ञानिकों का अनुभव एवं संज्ञान यह स्पष्ट करता हैं कि अध्यापकों द्वारा अध्येताओं को व्यक्तिगत निर्देशन एवं परामर्श के उपाय करने चाहिए। उक्त स्थिति में अध्येता को निर्देशन एवं परामर्श के लिए अध्यापकों द्वारा किये गए प्रयास के उद्देश्यों में अधोलिखित महत्त्वपूर्ण बिन्दु सम्मिलित किये जाने चाहिए।

(अ) अध्येताओं में वैचारिक उथल-पुथल स्वाभाविक है, यह समझ बनाने का प्रयास अध्यापक द्वारा किया जाना अपेक्षित है। इसके लिए आवश्यक है कि अध्यापक के अध्यापन प्रक्रिया में पाठ्येतर, रचनात्मक एवं सृजनात्मक गतिविधियां समाविष्ठ करनी चाहिए।

(ब) अध्यापक द्वारा अध्येताओं की स्वास्थ्य, सुरक्षा और शारीरिक शिक्षा से सम्बन्धित कार्यक्रमों को प्रारम्भ करना चाहिए तथा उक्त कार्यक्रम अबाध गति से निरन्तर सम्पादित रखने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।''[7]

(स) अध्येताओं में पारस्परिक सम्बन्धों एवं सैक्स सम्बन्धित समस्याओं का बुद्धिमतापूर्ण तथा नियंत्रण भावना से समझाने का प्रयत्न करें एवं अनुशासन के महत्त्व की भी समझ होनी चाहिए।

(द) सामाजिक जीवन से लाभ उठाने के उद्देश्य से सामाजिक जीवन से सम्बन्धित सामाजिक सेवा, सामुदायिक सेवा एवं जन सेवा कार्यों में भाग लेने के लिए अभिप्रेरित करना चाहिए।

(य) अध्यापक को अध्येताओं में आश्रित निर्णय लेने व कार्य करने की स्थिति में परिवर्तन करना चाहिए। शिक्षक द्वारा परिवर्तन पश्चात् अध्येता स्वयं निर्णय लेने व स्वतंत्र कार्य करने में सक्षम होने लग जाये।

4. महाविद्यालय स्तर

महाविद्यालय स्तर पर अध्येता आयु में किशोरावस्था पार कर चुके होते हैं। इनमें प्रोढता का श्रीगणेश होता है।''[8] अब अध्येता के सम्मुख व्यवसाय, विवाह एवं आर्थिक समस्याएं होती हैं। इस समय प्रत्येक अध्येता को व्यक्तिक निर्देशन एवं परामर्श की आवश्यकता होती है। यहां अध्येताओं के लिए अपेक्षित सुझाव एवं सलाह के लिए के लिए अध्यापक को, शैक्षिक प्रशासकों एवं नीति-निर्माताओं द्वारा प्रदत की जानी चाहिए। जिससे शिक्षा के वांछित लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके। अध्येताओं को व्यक्तिक निर्देशन एवं परामर्श के लिए अध्यापकों व शैक्षिक प्रशासकों का अधोलिखित बिन्दुओं पर ध्यान अपेक्षित है।

(अ) प्रत्येक अध्यापक को शैक्षिक निर्देशन एवं परामर्श के लिए दक्ष बनाने हेतु प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए। यह प्रशिक्षण अध्यापकों, शैक्षिक प्रशासकों एवं अध्येताओं के लिए महत्त्वपूर्ण हो तथा शैक्षिक विजन 2020 के लक्ष्य प्राप्ति में सहायक होना चाहिए।

(ब) अध्यापक को अध्येताओं के मध्य परामर्शदाता, सहयोगी एवं मित्रों के रूप में स्पष्ट होना चाहिए। महात्मा गाँधी के उक्त प्रश्न या कथन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सामाजिक एवं प्रशासनिक अनुभव ही होते हैं।

(स) अध्येताओं के बाल मन व बाल मनोविज्ञान समझकर उसके अनुरूप अपेक्षित व्यवहार अध्यापक द्वारा किया जाना चाहिए। अध्येताओं के व्यवहार की उपेक्षा स्वयं के बाल्यकाल में किये गये व्यवहार से तुलना करते हुए करना चाहिए।

(द) अध्यापकों एवं प्रशासकों द्वारा अध्येताओं को प्रतिदिन समाचार पत्र, पत्र-पत्रिकाएँ एवं रोजगार समाचार पढ़ने के लिए उपलब्ध करवाने चाहिए तथा इन्हें पढ़ने के लिए प्रेरित करने के साथ-साथ प्रतिदिन न्यूनतम 30 मिनट समय उपलब्ध करवाना चाहिये।

(य) प्रत्येक संस्था में शैक्षिक परामर्श एवं निर्देशन की एक इकाई गठित करें। उक्त इकाई के प्रभारी को यह उतरदायित्व सुपुर्द किया जावे कि प्रति दिन सूचना पट्ट पर रोजगार एवं केरियर से सम्बन्धित सूचनाओं से अध्येताओं

को अवगत करवायें। समय-समय पर संस्थान में रोजगार सूचना एवं केरियर संभावनाओं पर संस्थान स्तर के सम्मेलन आयोजित करें। सम्मेलन में उचित रोजगार चयन के लिए परामर्श एवं प्रतिभाओं को अवसर उपलब्ध करवाने व परिष्कृत करने का प्रयास किया जाना चाहिए।

(र) अध्येताओं की आवश्यकताओं, अभिवृत्तियों, रुचियों, आदतों, संवेगों एवं निर्देशन अध्यापकों एवं प्रशासकों द्वारा निरन्तर किया जाना चाहिए।

(ल) संस्थान द्वारा समय समय पर विभिन्न व्यवसायों को चयनित करने की प्रक्रिया के समय पुरस्कारों एवं प्रत्याशित हानियों के सम्बन्ध में जानकारी उपलब्ध करवानी चाहिए। अध्येताओं की आकांक्षा स्तर एवं उपलब्धि स्तर का अध्ययन संस्थान द्वारा किया जाये, अध्ययन के परिणाम आधारित अपेक्षित परामर्श एवं मार्गदर्शन की व्यवस्था उपलब्ध करवानी चाहिए, ताकि प्रत्येक अध्येयता को उनकी रुचि एवं उपलब्धि स्तर के अनुसार लाभ मिल सके।

(व) प्रत्येक संस्था में या परिक्षेत्र स्तर पर अध्यापकों एवं प्रशासकों द्वारा समय समय पर विषय विशेषज्ञों द्वारा अध्येताओं के मध्य रोजगार एवं केरियर की चर्चाएं आयोजित की जानी चाहिए।

(स) विभिन्न रोजगार की सम्भावनाओं पर आधारित अपेक्षित कौशल विकास के कार्यक्रम आयोजित किये जाने चाहिए। व्यावसायिक प्रतिष्ठानों द्वारा रोजगार मैले का आयोजन करवाकर अध्येताओं को रोजगार चयन के संस्थान परिक्षेत्र में अवसर उपलब्ध करवाये व सहयोग प्रदान करें।

उपसंहार

शैक्षिक प्रशासकों, शैक्षिक नीति-निर्माताओं से अपेक्षा की जाती है कि शैक्षिक परामर्श एवं निर्देशन के क्षेत्र में, शिक्षा क्षेत्र विजन 2020 के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अधोलिखित कार्य प्रत्येक संस्था व परिक्षेत्र स्तर आयोजित किये जाने चाहिए।

1. राज्य स्तर, परिक्षेत्र स्तर व संस्था स्तर पर शैक्षिक परामर्श एवं निर्देशन की योजना निर्मित करनी चाहिए।
2. अध्येताओं की आकांक्षा, उपलब्धि, रुचि, आदत आंकलन की सुविधा संस्था स्तर पर उपलब्ध होनी चाहिए। इस आधार पर रोजगार चयन अवसर, सेमिनार, कौशल परिवर्धन सुविधा, संस्था स्तर पर रोजगार चयन अवसर आदि उपलब्ध करवाये।

ऐसी स्थितियां उक्त कार्यों से उत्पन्न हो जायेगी जिससे सभी वर्ग, दुर्गम स्थानों पर रहने वाले अध्येताओं को रोजगार चयन अवसर व सहायता उपलब्ध हो जायेगी। उसके परिणामस्वरूप शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति हो जायेगी। संस्थाओं में नामाकंन वृद्धि होगी। प्रत्येक अध्येता स्वावलम्बी, स्वतंत्र निर्णय, नैतृत्व गुण से औत-प्रोत होगा। संक्षेप में यह कह सकते हैं कि अध्येता मानवीय मूल्यों से परिपूर्ण सम्बन्धों पर आधारित स्वयं की भूमिका निर्मित करने वाला तैयार होगा।

संदर्भ

1. एस.नारायण राव, काउंसिलिग एण्ड गाइडेंस, सैकण्ड एडिसन, टाटा मेंग्रोवहिल, 2007, पृ. 136-276
2. डी, रसल, ऑन एज्यूकेशन, जॉर्ज एलन एण्ड अनविन लिमिटेड, 1969
3. ए.जे.आर विलसन, रॉबिक एम.सी, माईकल, डबल्यू.बी., *साइकोलोजी फाउण्डेशन ऑफ लर्निंग एण्ड टीचिंग*, मेंग्रोवहिल बुक, 1969, पृ. 415-429
4. गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, *रिपोर्ट ऑफ द एज्यूकेशन कमीशन* (1964-66), एज्यूकेशन एण्ड नेशनल डवलपमेन्ट, एज्यूकेशन डिपार्टमेन्ट, नई दिल्ली, 1966
5. *नेशनल पोलिसी ऑफ एज्यूकेशन*, मिनिस्ट्री ऑफ ह्यूमन रिसोर्स डवलपमेन्ट, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, 1986
6. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा*, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद 2005, नई दिल्ली
7. राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय : 'परिप्रेक्ष्य', 2012
8. राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्व विद्यालय-बी. श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली वर्ष 2012 अंक-2 अगस्त 2012

डॉ. महेश शर्मा

सहायक प्रोफेसर

शिक्षा संकाय

प्रभारी, आई.ए.एस.ई. मानित विश्वविद्यालय

बी.ए.बी.एड./बी.एससी.बी.एड

गाँधी विद्या मन्दिर, सरदारशहर, चूरू (राज.)

❑❑❑

ललित शर्मा : हाड़ौती की जैन मूर्तिकला एवं शिलालेख

• समीक्षक : डॉ. राजेन्द्र कुमार

हाड़ौती अंचल में सहस्त्राब्दियों से प्रचलित रही मूर्तिकला के अनेक मूल्यवान प्रतिरूप आज भी यत्र-तत्र देखे जा सकते हैं, जिनमें से कुछ प्रतिरूपों को कोटा व झालावाड़ के राजकीय संग्रहालय में संग्रहित व संरक्षित किया गया है। इन मूर्तियों के निर्माण काल व प्राणप्रतिष्ठा से सम्बद्ध महत्त्वपूर्ण जानकारी समसामयिक शिलालेखों में उद्धृत है। ललित शर्मा ने इन्हीं मूर्तियों एवं शिलालेखों के आधार पर अपनी शोधपरक पुस्तक ''**हाड़ौती की जैन मूर्तिकला एवं शिलालेख**'' का वर्ष 2014 में प्रकाशन करवाया। इस पुस्तक की रचना से पूर्व शोध की दृष्टि से इन मूर्तियों पर कोई महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं हो पाया है। अतः ललित शर्मा को इन मूर्तियों का विवेचनात्मक परिचय देने के साथ ही मूर्तिकला से जुड़े विभिन्न पक्षों का व्याख्यात्मक विवरण प्रस्तुत करने का श्रेय दिया जा सकता है।

लेखक ने इस पुस्तक को पांच अध्यायों में विभक्त किया हैं, जिसका प्रथम अध्याय जैन मूर्तिकला एवं शिलालेख विषय पर सारगर्भित परिचय प्रस्तुत करता है। इस पुस्तक के विवरणानुसार हाड़ौती क्षेत्र में जैन धर्म से संबद्ध मूर्तिकला का आठवीं से 17वीं सदी के विस्तृत कालखंड के दौरान बहुआयामी विकास हुआ। विशेषतः 11वीं से 13वीं सदी के मध्य का काल इस क्षेत्र में जैन मूर्ति-स्थापत्य एवं शिलालेखों के निर्माण की दृष्टि से स्वर्णकाल कहा जा

सकता है। इस कालखंड के दौरान निर्मित विभिन्न मूर्तियों के क्रमोन्नत विकास की गति को हम कोटा एवं झालावाड़ के म्यूजियम में रखी गई मूर्तियों के परिप्रेक्ष्य में समझ सकते हैं।

यह महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि इस पुस्तक के माध्यम से लेखक ने यह बताने का प्रयास किया है कि राजस्थान में जैन मूर्तिकला का निर्माण छठी से सातवीं सदी के बीच प्रारंभ होता है एवं तेरहवीं सदी तक इनका प्रचुर मात्रा में निर्माण हुआ। इसी प्रकार छठी-सातवीं सदी के दौरान हाड़ौती क्षेत्र में जैन मूर्तिकला के निर्माण के उदाहरण प्राप्त होते हैं। लेखक द्वारा कोटा एवं झालावाड़ म्यूजियम में रखी गई मूर्तियों का संक्षेप में अध्ययन कर ऐतिहासिक दृष्टि से उनकी विवेचना की गई है। इससे लेखक के मूर्ति-ज्ञान का परिचय मिलता है। इसी अध्याय में लेखक द्वारा हाड़ौती क्षेत्र से उपलब्ध प्राचीन जैन शिलालेखों का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है जो इतिहास की दृष्टि से अमूल्य है परंतु लेखक इन शिलालेखों की प्रमाणिकता हेतु इतिहासकारों के प्रति अपनी निर्भरता प्रकट करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि लेखक इन शिलालेखों की प्राचीनता तथा प्रमाणिकता के बारे में अपने अध्ययन व अन्वेषण की दृष्टि से ठोस रूप से कुछ भी कहने की स्थिति में नहीं है।

पुस्तक का द्वितीय अध्याय बहुत महत्त्वपूर्ण है जिससे ज्ञात होता है कि कोटा क्षेत्र में कोटा, अटरू, शेरगढ़, रामगढ़, बारा तथा बूंदी क्षेत्र में नैणवा, केशोरायपाटन सहित झालावाड़ के पचपहाड़, झालरापाटन, गागरोन, अकलेरा तथा चांदखेड़ी से सैकड़ों जैन मूर्तियां प्राप्त हुई हैं, जिनका अभी प्रकाश में आना शेष है, प्रमुखत: 11वीं से 13वीं सदी के कालखंड में यहां जैन समाज द्वारा पोषित कला व संस्कृति का प्रतिनिधित्व करने वाली विभिन्न मूर्तियों का निर्माण हुआ। इन मूर्तियों में जैन दर्शन के सौंदर्य भाव तथा अभिव्यक्ति सहित भद्रता, सरलता और आध्यात्मिकता का अद्भुत दर्शन होता है। लेखक ने प्राप्त मूर्तियों की कला का तत्कालीन साहित्यिक स्रोतों एवं शिलालेखों के प्रकाश में विश्लेषणात्मक अध्ययन किया है एवं म्यूजियम में संरक्षित उक्त मूर्तियों की विभिन्न रचना विधाओं एवं स्वरूप की बहुत ही विलक्षण ढंग से व्याख्या की है।

यदि लेखक द्वारा इन मूर्तियों के व्याख्यात्मक विवरण के स्थान पर ही तत्संबंधी मूर्तियों का यथोचित चित्र भी लगा दिया जाता तो जैन मूर्तिकला की उत्कृष्ट शैली एवं तत्कालीन जैन धर्म के सांस्कृतिक स्वरूप को समझ पाना पाठकों के लिए अधिक सरल होता।

शर्मा जी ने पुस्तक के तीसरे अध्याय में हाड़ौती क्षेत्र से अवाप्त दीर्घ कालखंड के दौरान लिखित जैन शिलालेखों का गुणात्मक एवं व्याख्यात्मक विवेचन किया है। यद्यपि प्रथम अध्याय में भी इसी प्रकार से जैन शिलालेखों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है, यदि प्रथम अध्याय में ही इस अध्याय की सूचनाओं को समायोजित कर दिया जाता तो अधिक उपयुक्त होता अन्यथा यह विषय की पुनरावृति सी प्रतीत हो रही है।

लेखक ने इस पुस्तक को सुपठित बनाने एवं विवेचित मूर्तियों की विशद् दार्शनिक व्याख्या को समझाने के लिए जैन मूर्तियों के आकार-प्रकार एवं देवी-देवताओं की विभिन्न मुद्राओं के लिए प्रयुक्त होने वाली शब्दावली से परिचित कराने के लिए तत्कालीन गूढ़ शब्दावली का शब्दार्थ करने का अच्छा प्रयास किया है, अवश्य ही सुधी पाठक इस शब्दावली के सहयोग से जैन मूर्ति कला के विभिन्न स्वरूपों को समझने में सहजता का अनुभव करेंगे। लेखक इस कार्य के लिए साधुवाद के पात्र है।

पुस्तक का महत्त्वपूर्ण पक्ष जैन तीर्थंकरों व अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियों के लक्षणों को सुस्पष्ट करने का महती प्रयास है। मथुरा शैली में निर्मित जैन मूर्तियों में प्रयुक्त लांछनों, महापुरुष लक्षण (जैन मूर्तियों के वक्ष पर श्रीवत्स का अंकन उन्हें बोध मूर्तियों से पृथक पहचान देता है) के द्वारा कुषाणकाल से लेकर गुप्तकाल के मध्य निर्मित हुई जैन मूर्तियों के मध्य भेद करने का प्रयास किया गया है, जो पुस्तक की सुंदरता को बढ़ाने में अति सहायक है। जीवंत स्वामी, नेगमेष, तथा रेवती, इंद्र, चक्रेश्वरी, अंबिका, पद्मावती, देवी तथा क्षेत्रपाल आदि की मूर्तियों के लक्षणों को भी विशिष्टता के साथ स्पष्ट किया गया है। जैन मूर्तिकला के मुख्य तत्त्व-आयागपट्ट (आर्यकपट्टक) को परिभाषित करने का भी इस पुस्तक के माध्यम से प्रयास किया गया है।

लघु, परन्तु सारगर्भित यह पुस्तिका अवश्य ही जैन मूर्तिकला पर शोध-कार्य करने वाले शोधार्थियों तथा अन्य विद्वतजनों के लिए ज्ञान का एक नवीन मार्ग प्रशस्त करेगी।

समीक्षक : **डॉ. राजेन्द्र कुमार, बीकानेर**

प्रकाशक : सुरेन्द्र कुमार सेठी फाउण्डेशन, कोटा

वर्ष : 2014

मूल्य : एक सौ एक रुपए मात्र

पृष्ठ संख्या : 58

❑❑❑

मरुभूमि शोध संस्थान, श्रीडूंगरगढ़

प्रबन्ध मण्डल

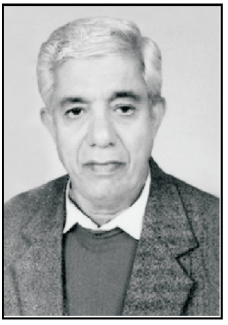

प्रो. बी.एल. भादानी
अध्यक्ष एवं पदेन निदेशक

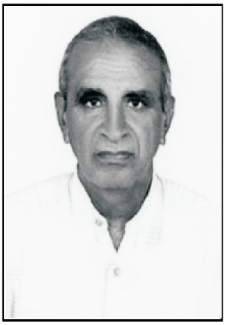

डॉ. भंवरसिंह सामोर
उपाध्यक्ष

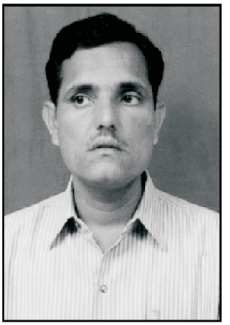

डॉ. चेतन स्वामी
उपाध्यक्ष

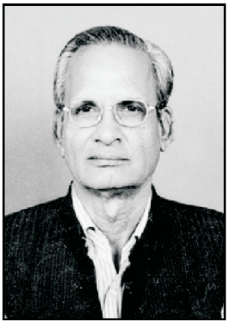

श्याम महर्षि
सचिव

सत्यदीप
उपसचिव

रामचन्द्र राठी
उपसचिव

जूनी ख्यात जुलाई–दिसम्बर, 2019 वर्ष : 9, अंक : 1 ISSN : 2278-4632

देश की
धड़कन
राजस्थान
की शान

राजस्थली

की यही पहचान

- हम जीवन में बीसियों तरह के व्यसन–शौक पालते हैं परन्तु पढ़ने की आदत नहीं डालते। यही कारण है कि हम अपनी सांस्कृतिक पहचान, शख्सियत और वजूद को संरक्षित नहीं रख पा रहे हैं।
- राजस्थानी ही वह भाषा है जिसकी लोरियों तले हमारा बचपन खेला, कूदा और बड़ा हुआ है। अपने पांवों पर खड़ा होने के बाद ममत्व और वात्सल्य को भुलाना तो हमारी परम्परा नहीं रही है। तो फिर हम क्यों भूल रहे हैं हमारी बाल–सुलभ जिज्ञासाओं को अनथक शांत करने वाली इस मायड़ को ?
- आईये ! हम भी बंगाल की तरह हमारे घरेलू बजट में पत्र–पत्रिकाओं को शामिल कर अपने बच्चों को एक सद्–संस्कार दें। परिवार को अपना वाजिब हक दें। अपने गैर–जरूरी खर्चों में कटौती कर पीढ़ियों को संस्कारित करने के इस अनुष्ठान में सहयोगी बनें।
- आज ही **राजस्थली** के सदस्य बनें और बनायें। पत्र–पत्रिकाओं को सहयोग और उनका संरक्षण हमारी नैतिक जिम्मेदारी है।

आओ ! **राजस्थली** को स्वावलम्बी बनाएं और
पुस्तक प्रेम की हमारी सांस्कृतिक परम्परा का परिचय दें।

सदस्यता शुल्क विवरण		
	पाँच वर्ष के लिए	400 रुपये
	आजीवन	1000 रुपये
	संरक्षक सदस्यता	5100 रुपये

महावीर प्रसाद माली मरुभूमि शोध संस्थान, श्रीडूँगरगढ़ के लिए मुद्रित एवं प्रकाशित।

मुद्रक : महर्षि प्रिंटर्स, श्रीडूँगरगढ़ (बीकानेर) राज.